प्रौढ़ शिक्षा

अप्रैल–जून 2019
वर्ष 63 अंक–2

सम्पादक मण्डल

प्रो. भवानीशंकर गर्ग
(संरक्षक)

श्री मृणाल पंत
श्री ए.एच.खान
डा. सरोज गर्ग
श्री दुर्लभ चेतिया
डा. डी.के.वर्मा
डा. उषा राय
डा. मदन सिंह
श्री एस.सी. खंडेलवाल
श्री राजेन्द्र जोशी

प्रधान संपादक
श्री कैलाश चौधरी

सम्पादक
डा. मदन सिंह

सहायक सम्पादक
बी. संजय

इस अंक में

संपादकीय

शासकीय उच्चतर माध्यमिक स्तर के कक्षा 11वीं के वाणिज्य संकाय की शहरी एवं ग्रामीण बालिकाओं के अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन
— ज्योत्स्ना खरे
— विनायक इंगले 5

खण्डवा ज़िले के पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन
— अशोक कुमार नेगी 12

वक्त की मांग है लैंगिक समानता
—मोनिका शर्मा 22

रोजगार का संकट
— संतोष मेहरोत्रा 25

स्त्री का हक
— निशा नाग 28

मूल्यः रूपये 200/—वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं, जिनके लिए संघ एवं सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है ।

नगर समाज की संकल्पना तथा कार्य क्षेत्र
– डिम्पल कुमारी 30

स्त्री सशक्तीकरण : बदलते जीवन–मूल्य
–रश्मि रानी 41

हमारे लेखक 44

अधूरे अटैम्पट से शत प्रतिशत उपलब्धि शायद ही सम्भव हो सकेगा

वर्तमान विश्व में संचालित सभी विकासात्मक गतिविधियों एवं कार्यक्रमों का उद्देश्य वर्ष 2030 तक सतत् विकास लक्ष्यों को सफलतापूर्वक लागू करने की है ताकि सर्व समावेशी एवं समतापूर्ण विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। एसडीजी के तहत शामिल 17 विकास लक्ष्यों में पांचवां लक्ष्य लैंगिक समानता को सुनिश्चित करना है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य सभी 193 देशों का यह मानना है कि विविध प्रकार की असमानताओं, हिंसा एवं महिलाओं तथा लड़कियों के साथ होने वाले हानिकारक क्रियाकलापों यथा खरीद–फरोख्त, यौन उत्पीड़न आदि को समाप्त कर लैंगिक समानता स्थापित करना, सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के पूर्व शर्त समान है। इस लक्ष्य के तहत यह मांग की गई है महिलाओं द्वारा किए जा रहे घरेलू कार्य एवं अवैतनिक सेवा का भी सम्यक आर्थिक मूल्याकंन किया जाना चाहिए। साथ ही साथ राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के सभी स्तरों पर प्रभावी नेतृत्व तथा निर्णय प्रक्रिया में उनकी समान, सहभागी एवं प्रभावी भूमिका सुनिश्चित की जानी चाहिए।

भारत में महिलाएं स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं, शिक्षा, पोषण, रोजगार या सम्पति के अधिकार जैसे जीवन के तमाम क्षेत्रों में विविध प्रकार के असमानताओं की सामना कर रही हैं जो समूच्य के रूप में 6 वर्ष तक के बच्चों में लिंग अनुपात के आंकड़ों से स्पष्ट होता है। सन् 2001 में जहां भारत में लिंग अनुपात प्रति एक हजार पुरूषों पर 927 महिलाएं थीं जो सन् 2011 में घटकर महज 919 रह गईं। साक्षरता की नजर से देखें तो भी यह असमानता व्यापक अंतराल के रूप में सामने आती है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की पुरूष साक्षरता दर जहां 82 प्रतिशत थी वहीं महिला साक्षरता दर मात्र 65 प्रतिशत ही रही। नेतृत्व और निर्णय प्रक्रिया में यह असमानता कहीं और ज्यादा मुखरित है। सरकार ने इस स्थिति को बदलने का भरसक प्रयास किया है। साक्षर भारत कार्यक्रम के माध्यम से महिला साक्षरता दर को बढाने पर विशेष रुप से ध्यान दिया गया। पंचायती राज संस्थाओं में 33 प्रतिशत सीटों को महिलाओं के लिए आरक्षित कर निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी तथा नेतृत्व में असमानता को कम करने का प्रयास किया गया है। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, सुकन्या समृद्धि योजना, मुद्रा योजना, प्रधानमंत्री उज्जवला योजना ऐसे ही कई अन्य सुनियोजित प्रयास हैं जिनके कारण लैंगिक असमानता को कम करने की दिशा में किए जा रहे प्रयासें को बल मिला है।

सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा विकसित सस्टेनेबल डेवेल्पमेंट गोल्स नेशनल इंडिकेटर फ्रेमवर्क बेस लाइन रिर्पोट 2015–16 सतत् विकास लक्ष्य के पंचम लक्ष्य अर्थात लैंगिक समानता की स्थिति के आंकलन हेतु तय नौ लक्ष्यों के लिए 29 सूचकांक विकसित किए हैं जिनमें से 24 से संबंधित आंकडे मंत्रालय के पास उपलब्ध हैं।

एसडीजी इंडिया इंडैक्स – बेस लाइन रिर्पोट 2018 में इस लक्ष्य की दिशा में हो रही प्रगति के मूल्यांकन के लिए उपरोक्त 29 सूचकांकों में से केवल 6 सूचकांकों का ही चयन किया गया है जो

सम्मिलित रुप से इसके पंचम लक्ष्य के तहत शामिल कुल 9 उद्देश्यों में से मात्र 4 पर हुई प्रगति को उजागर करते हैं। इन सूचकांकों में जन्म के समय लिंग अनुपात, ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में 15 से 59 के बीच के नियमित वेतन अथवा मेहनताना प्राप्त करने वाली महिलाओं एवं पुरुषों के औसत वेतन अथवा मेहनताना के अनुपात में अन्तर, वर्ष 15 से 59 के बीच के निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत जिन्होंने वैवाहिक हिंसा का सामना किया हो, आम चुनाव से लेकर राज्य विधानसभा चुनावों में महिलाओं द्वारा हासिल जीत का प्रतिशत, देश के सकल कार्यबल में महिला एवं पुरुष मजदूरों के प्रतिभाग का अनुपात, 15 से 49 आयु वर्ग के महिलाओं में आधुनिक परिवार नियोजन माध्यमों के उपयोग करने वाली महिलाओं का प्रतिशत आदि शामिल हैं।

एसडीजी इंडैक्स में भारत में लैंगिक समानता का मूल्यांकन 100 पाईंट वाले स्केल पर किया गया है। इस स्केल पर राज्यों की उपलब्धि का व्याप 24 से 50 के बीच तथा केन्द शासित प्रदेशों का व्याप 27 से 58 प्वाईंट तक है। राज्यों में केरल और सिक्किम तथा केन्द्र शासित प्रदेशों में चंडीगढ़ एवं अण्डमान निकोबार द्वीप समूह की उपलब्धता 50 से 65 के बीच है शेष सभी राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों का उपलब्धि स्तर 50 प्वाईट के नीचे है। वहीं सम्पूर्ण देश का औसत उपलब्धि स्तर 36 प्वाईंट है। रिर्पोट में उपलब्धियों के स्तर के मद्देनजर राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को एचिवर (Achiever-100 points), फ्रंट–रनर (Front-Runer 65–99 points), परफार्मर (Performer 50–60 points) और एस्पिरेंट (Aspirants 0–49 points) के बीच विभाजित किया गया है। चौंकाने वाली बात यह है कि उपलब्धियों के स्तर पर हमारे यहां एचिवर और फ्रंट–रनर कोई है ही नहीं।

ताजा आंकडों के अनुसार राज्य विधानसभाओं में महिलाओं की उपस्थिति महज 8.7 प्रतिशत है, प्रति तीन में से एक महिला वैवाहिक हिंसा का शिकार है और प्रति 1000 हजार पुरुष पर महज 898 महिलाएं ही जन्म लेती हैं। पुरुषों की तुलना में महिलाओं की आय मात्र 70 प्रतिशत है, 15 – 49 आयु वर्ग की महिलाओं में आज भी मात्र 54 प्रतिशत ही आधुनिक परिवार नियोजन के माध्यमों का प्रयोग करती हैं और देश के सम्पूर्ण कार्यबल में महिला कार्यबल की उपस्थिति मात्र 32 प्रतिशत है।

स्पष्ट है कि लैंगिक समानता की दृष्टि से सतत विकास लक्ष्यों और भारत की उपलब्धियों के बीच एक बड़ा फासला विद्यमान है। ऐसे में साक्षर भारत जैसे कार्यक्रमों को रोक दिया जाना और वह भी बिना किसी वैकल्पिक कार्यक्रम के शुरुआत के, चौंकाने वाला प्रतीत होता है। इतना ही नहीं कई मायनों में हम सतत विकास लक्ष्यों को सम्पूर्णता में अटैम्पट भी नहीं कर रहे हैं। ऐसे में शत प्रतिशत उपलब्धि पर सदैव ही सवाल खड़ा रहेगा।

– बी. संजय

शासकीय उच्चतर माध्यमिक स्तर के कक्षा 11वीं के वाणिज्य संकाय की शहरी एवं ग्रामीण बालिकाओं के अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

– ज्योत्स्ना खरे
– विनायक इंगले

सामान्य वर्गीकरण के अनुसार उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी किशोरावस्था के अंतर्गत आते हैं। यह व्यक्तित्व के विकास की वह अवस्था है जिसमें बालक एवं बालिकाओं के अंदर विभिन्न प्रकार के शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन हो रहे होते हैं। अपने शरीर एवं मन – मस्तिष्क में हो रहे इन परिवर्तनों से अकसर किशोर बालक एवं बालिकाएं अनभिज्ञ होते हैं। परिणामस्वरुप ये परिवर्तन उनके मानस में अनेक प्रकार के सन्देह उत्पन्न करते हैं। ऐसे में बालक–बालिकाओं का चित्त विविध प्रकार की चंचलताओं का शिकार हो जाता है और स्वाभाविक ही उनमें दिशाभ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इन परिवर्तनों को ध्यान में रखकर यदि इनकी शक्ति को वांछित दिशा प्रदान किया जाए तो निश्चित ही उनके भविष्य निर्माण में उल्लेखनीय मदद मिलेगी और वे उपलब्धियों की नई ऊंचाई प्राप्त कर सकेंगे।

उपरोक्त विवेचन का तात्पर्य यह है कि यदि कोई विद्यार्थी अपने पारिवारिक वातावरण से विद्यालय के नये वातावरण मे जाता है तो वह स्वयं को पहले जैसा स्वतंत्र नहीं पाता तथा इस नये वातावरण में पाये जाने वाले मानसिक व्यवहार एवं भौतिक कारक उसे प्रभावित करते हैं जिस कारण विद्यार्थी मनोवैज्ञानिक रूप से समस्याग्रस्त हो जाता है। यदि इन वातावरणीय कारकों से विद्यार्थी अपने आप को समायोजित कर लेता है तो वह अपनी पूर्व निर्धारित उपलब्धि को प्राप्त कर लेता है। अर्थात् बालक जितना अधिक अपने आसपास के वातावरण से समायोजन कर लेता है, उसी के अनुसार उसे पूर्व निर्धारित उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि छात्रों की उपलब्धि को उनकी अध्ययन आदतें प्रभावित करती हैं। यह सभी जानते हैं कि हर बालक का व्यवहार अलग–अलग होता है। इस अध्ययन से यह इंगित होता है कि यदि कोई बालक मिलनसार, हंसमुख, जिज्ञासु, तर्कशील है, तो उसकी उपलब्धि दूसरे बालक की अपेक्षा अच्छी होगी।

शैक्षिक उपलब्धि

व्यक्ति अपने जीवन में स्वयं के प्रयासों एवं अनुभवों के कारण अनेक प्रकार के ज्ञान तथा कौशल प्राप्त करता है। इस ज्ञान तथा कौशल प्राप्ति में व्यक्ति ने कितनी दक्षता प्राप्त की है, इसका पता प्राप्त ज्ञान तथा कौशल के उपलब्धि परीक्षण से चलता है। व्यक्ति की उपलब्धि उसकी अध्ययन आदत व आत्मविश्वास, विद्यालयीन वातावरण, शिक्षा का माध्यम

आदि पर निर्भर करती है। व्यक्ति की उपलब्धियों का प्रभाव उसके व्यवहार में परिलक्षित होता है और व्यवहार व्यक्तित्व को उत्पन्न करती है, जिस कारण व्यक्ति किसी कार्य को प्रभावित एवं आत्मविश्वास के साथ करने का प्रयास करता है। चूंकि शिक्षण भी एक प्रकार का कार्य है, अतः यह जानना आवश्यक हो जाता है कि उपलब्धि किस तरह से अध्ययन आदत को प्रभावित करती है एवं शिक्षा से इसका क्या संबंध है। इस तरह उपलब्धि के लिए अध्ययन आदत के संबंधों को ज्ञात करना आवश्यक हो जाता है। विद्यार्थियों में कुछ करने की क्षमता होती है परंतु कुछ शैक्षिक गतिरोधों और बाधाओं के कारण वे जैसा चाहते हैं वैसा कर नहीं सकते।

अध्ययन आदत

अध्ययन

व्यक्ति जब दूसरों के अनुभवों को शब्दों, निरिक्षण, चिन्तन, मनन द्वारा ग्रहण करता है अथवा उनका लाभ उठाता है, तो यह प्रक्रिया अध्ययन कहलाती है। आजीवन शिक्षा के सिद्धान्तों के अनुसार व्यक्ति सदा अध्ययनरत् रहता है। यह आवश्यक नहीं कि वह केवल शब्दों का अध्ययन करता हो। वह व्यवहार का भी अध्ययन करता है। ज्ञात सभी माध्यमों से ज्ञान को ग्रहण करने की प्रक्रिया का नाम ही अध्ययन है।

अध्ययन का सर्वमान्य अर्थ है – उन तथ्यों, विचारों, विषयों, विधियों, समस्याओं आदि. का ज्ञान प्राप्त करना जिससे छात्र या व्यक्ति अनभिज्ञ होता है। अधिक विश्वस्त रूप से हम यह कह सकते हैं कि नवीन विषय सामग्री का ज्ञान प्राप्त करने के लिय अथवा किसी समस्या के समाधान करने के लिये, विभिन्न विषयों, क्रियाओं एवं परिस्थितियों में सम्बन्धों की खोज करने के लिये तथा किसी उदेश्यपूर्ण क्रिया का ज्ञान प्राप्त करने के लिये छात्र या सीखने वाले के द्वारा अभ्यास किया जाता है और उसी को अध्ययन माना जाता है। अध्ययन वास्तव में नवीन ज्ञान को प्राप्त करने के लिये छात्र द्वारा किया जाने वाला नियोजित प्रयास है। यदि उसका प्रयास एक निश्चित योजना या विधि के अनुसार नहीं है तो वह नवीन ज्ञान को प्राप्त करने में कदापि सफल नहीं हो सकता है।

आदत

आदतें जन्मजात न होकर अर्जित होती हैं। इन्हें प्रयास पूर्वक अर्जित किया जाता है। आदतें सीखी जाती हैं। आदतें मशीन की क्रियाओं के समान होती हैं। इनमें सोच विचार की आवश्यकता नहीं पडती है। बार– बार एक ही काम को करने से उस काम की आदत पड़ जाती है। यह एक सीखा हुआ आचरण है। गैरेट (1964), के अनुसार, आदत उस व्यवहार

का नाम है, जो इतनी अधिक बार दोहराया जाता है कि वह व्यवहार स्वचलित हो जाता है। लैंडेल (1958), के अनुसार, आदत एक प्रकार का कार्य, जो आरम्भ में स्वेच्छा से और जानबूझकर किया जाता है परन्तु बार–बार दोहराये जाने कारण स्वचलित हो जाता है। आइजनेक (1972), और उनके साथियों के अनुसार आदत एक प्रथागत व्यवहार, प्रतिमान, ज्ञानात्मक या संवेगात्मक प्रत्युत्तर के समय विद्यमान होता है और कार्यरत परिस्थितियों के आधार पर इसकी भविष्यवाणी की जा सकती है। इसे अधिगम प्रक्रियाओं द्वारा अर्जित किया जाता है।

अध्ययन आदत को प्रभावित करने वाले तत्व

बालक–बालिकाओं के अध्ययन संबंधित आदतों को उनके ही वातावरण में मौजूद कई कारक महत्वपूर्ण रुप से प्रभावित करते हैं। इन कारको में बौद्धिक योग्यता. शारीरिक दशा. अध्ययन हेतु वातावरण. पारिवारिक पृष्ठभूमि. विषय व पाठशाला के प्रति सही दृष्टिकोण. सीखने की रूचि. अध्ययनों में उपयोगी स्थान आदि का महत्वपूर्ण स्थान है।

शोध का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध कार्य का उदेश्य "उच्चतर माध्यमिक स्तर के वाणिज्य संकाय की शहरी बालिकाओं एवं ग्रामीण बालिकाओं की अध्ययन आदत का तुलनात्मक अध्ययन करना" है।

परिकल्पना

"उच्चतर माध्यमिक स्तर के वाणिज्य संकाय की शहरी बालिकाओं एवं ग्रामीण बालिकाओं की अध्ययन आदत में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।"

शोध का प्रकार

प्रस्तुत शोध एक सर्वेक्षण अध्ययन है । इसके अन्तर्गत शोध परिकल्पना के परीक्षण हेतु न्यादर्श पर प्रश्नावली अनुसूचि का प्रशासन किया गया तथा न्यादर्श पर अध्ययन आदत अनुसूचि का क्रियान्वयन किया गया।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन सर्वेक्षणात्मक है। अतः इस शोध में शोधकर्ता द्वारा न्यादर्श का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया। न्यादर्श के रूप में हिन्दी माध्यम के उच्चतर

माध्यमिक स्तर के 215 विद्यार्थियों का चयन किया गया। इन विद्यार्थियों कि आयु 15 वर्ष से अधिक थी। इन विद्यालयों में शहरी एवं ग्रामीण आवासीय पृष्ठभूमि के विद्यार्थी सम्मिलित किये गये। चयनित विद्यार्थियों में बालक एवं बालिका दोनों को शामिल किया गया।सम्पूर्ण न्यायदर्श का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से है–

शासकीय विद्यालय	बालक
शहरी	100
ग्रामीण	115
कुल विद्यार्थी	215

उपकरण

प्रस्तुत शोध में शैक्षिक उपलब्धि, अधिगम शैली, अध्ययन आदत तथा आत्मविश्वास चरों से संबंधित प्रदत्त सम्मिलित किये गये। इन चरों के मापन/आंकलन हेतु प्रयुक्त प्रमापीकृत/शोधन द्वारा निर्मित उपकरणों का वर्णन क्रमानुसार निम्नरुप हैं –

1. शैक्षिक उपलब्धि के प्रदत्त के एकत्रीकरण हेतु न्यादर्श में चयनित विद्याार्थियों के पूर्व कक्षाओं के प्रतिशत अंकों का उपयोग किया गया।
2. अध्ययन आदत इनवेन्टरी के मापन हेतु डॉ.सी.पी. माथुर द्वारा निर्मित अध्ययन आदत इनवेन्टरी का उपयोग किया गया। इस इनवेन्टरी को कक्षा 11वीं के विद्यार्थियों पर मानकीकृत किया गया। हिन्दी भाषा पर उपलब्ध इस इनवेन्टरी में कुल 60 कथन दिये गये हैं जिसकी विश्वसनीयता +0.87 तथा वैधता +0.77 है। साथ ही इसकी विषय वस्तु वैधता भी स्थापित की गइ थी। यह परीक्षण 15+ वर्ष के विद्यार्थियों के लिये था।

प्रदत्त संकलन

प्रदत्त संकलन विधि हेतु शोधकर्ता द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया तथा प्रदत्त संकलन निम्न सोपानों के अन्तर्गत किया गया –

सर्वप्रथम न्यादर्श हेतु चयनित विद्यालय जिला बुरहानपुर के शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के प्राचार्यों से प्रदत्त संकलन हेतु अनुमति ली गई।

सभी विद्यार्थियों को नियत तिथि तथा समय पर उपस्थित होने की सूचना दी गई। न्यादर्श के लिए चुने हुए विद्यार्थियों को दिशा निर्देश प्रदान कर शोध का उद्देश्य स्पष्ट किया गया।

अध्ययन आदत सामूहिक परीक्षण हेतु विद्यार्थियों से तादात्मय स्थापित किया गया और उन्हें परीक्षण के उद्देश्यों से अवगत तथा आश्वस्त कराया गया कि परीक्षण से प्राप्त परिणाम

गोपनीय रखे जाएंगे। इसके बाद प्रश्नावली एवं उत्तर पत्रक देकर परीक्षण आरम्भ करने को कहा गया तथा निर्धारित समय के पश्चात् उनसे उत्तर पत्रक प्राप्त कर लिए गए।

प्रदत्तों का विश्लेषण

प्रस्तुत शोध कार्य में शोधकर्ता द्वारा प्रदत्तों के विश्लेषण का कार्य सांख्यिकीय प्रविधियों के द्वारा किया गया। प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए निम्नलिखित सांख्यिकीय प्रविधि का उपयोग किया गया।

उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अध्ययन आदत के माध्य फलांकों की तुलना के लिए स्वतन्त्र टी–परीक्षण का उपयोग किया गया।

सीमांकन

1. शोध कार्य हेतु न्यादर्श का आकार 215 रखा गया है।
2. प्रस्तुत शोध में उच्चतर माध्यमिक स्तर पर कक्षा 11वीं में अध्ययनरत् 15 + आयु स्तर के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया।
3. प्रस्तुत शोध में केवल कक्षा 11वीं में अध्ययनरत् कला संकाय के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया।
4. प्रस्तुत शोध में शासकीय विद्यालय में अध्ययनरत् शहरी बालक एवं ग्रामीण बालक दोनों को सम्मिलित किया गया।
5. शोध अध्ययन में हिन्दी माध्यम से शिक्षण प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों का चयन किया गया।
6. शोध कार्य में केवल शोधकर्ता द्वारा मानकीकृत परीक्षण का उपयोग किया गया।

पूर्व शोध

आलुजा (2004), ने सामाजिक व्यक्तित्व, शैक्षिक अभियोग्यता, अध्ययन आदत एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंधों का अध्ययन किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि यह अध्ययन विश्लेषित करता है कि व्यक्तित्व के कारक, शैक्षिक अभियोग्यता, अध्ययन आदत एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य उत्प्रेरकीय संबंध होता है। उच्च सामाजिक व्यक्तित्व शैली वाले छात्रों की अध्ययन आदत निम्न सामाजिक व्यक्तित्व शैली वाले छात्रों की अध्ययन आदत से अच्छी होती हैं। व्यक्तित्व एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंधों में अध्ययन आदत मध्यस्थता रखती हैं। छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि छात्रों की अपेक्षा अधिक पायी गयी। यह अंतर इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि छात्राएं अधिक सामाजिक व्यक्तित्व शैली एवं उच्च अध्ययन आदत प्रदर्शित करती हैं।

अब्बदुलाही (2010), ने उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अंग्रेजी भाषा में अध्ययन आदतों का अध्ययन किया। इस अध्ययन में न्यादर्श के रूप में नाइजेरिया के कवाराप्रदेश के 15.20 वर्षों के 200 छात्र–छात्राओं का चयन किया गया। परिणाम में पाया गया कि उच्चतर माध्यमिक विद्यालयके विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि उच्च हैं एवं यह भी देखा गया कि विद्यार्थियों की अध्ययन आदत जितनी अच्छी होगी भाषा का विकास भी उतना अच्छा होगा।

वसंती एवं सूथरमन (2011), ने 11वीं कक्षा के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं अध्ययन आदत पर अध्ययन किया। निष्कर्ष में पाया गया कि –

1. छात्र एवं छात्राओं के अध्ययन आदत में अन्तर पाया गया।
2. शासकीय एवं शासकीय अनुदान प्राप्त विद्यार्थियों के अध्ययन आदत में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
3. शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के अध्ययन आदत में सार्थक अन्तर पाया गया।
4. ग्रामीण विद्यार्थियों की अपेक्षा शहरी विद्यार्थियों की अध्ययन आदत उच्च पायी गयी तथा शहरी विद्यार्थियों की अपेक्षा ग्रामीण विद्यार्थियों की उपलब्धि निम्न होती हैं।

परिणाम एवं विवेचना

कला समूह के शहरी बालक एवं ग्रामीण बालक के अध्ययन आदत माध्यांक, न्यादर्श, मानक विचलन एवं टी–मूल्य को दर्शाती तालिका

क्षेत्र	न्यादर्श	माध्य	मानक विचलन	स्वतंत्रता कोटी	टी–मूल्य	सार्थकता का स्तर
शहरी	100	40.00	5.32	213	3.641	0.000
ग्रामीण	115	37.48	4.46			

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि टी का मान 3.641 है जिसके लिए सार्थकता स्तर का मान 0.000 हैं जो कि स्वतंत्रता कोटि 213 पर व 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। शहरी बालिका एवं ग्रामीण बालिका के अध्ययन आदत के मध्यमान में अन्तर है। तालिका से स्पष्ट होता है कि शहरी बालिकाओं के अध्ययन आदत का मध्यमान 40.00 तथा मानक विचलन 5.32 है। इसी प्रकार ग्रामीण बालिकाओं के अध्ययन आदत का मध्यमान 37.48 तथा मानक विचलन 4.46 है। जो यह दर्शाता हैं कि शहरी बालिकाओं की अध्ययन आदत, ग्रामीण बालिकाओं के अध्ययन आदत से अधिक विकसित पायी गयी।

अतः शून्य परिकलपना "उच्चतर माध्यमिक स्तर के वाणिज्य संकाय की शहरी बालिका

एवं ग्रामीण बालिका की अध्ययन आदत में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" निरस्त की जाती है। इस आलोक में निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि शहरीं बालिकाओं के अध्ययन आदत का मध्यमान, ग्रामीण बालिकाओं के अध्ययन आदत के मध्यमान से सार्थक रूप से उच्च है।

सुझाव

1. प्रस्तुत शोध कार्य के परिणामों का क्रियान्वयन कर शिक्षण को प्रभावी एवं उत्कृष्ट बनाया जा सकेगा।
2. इस स्तर के विद्यार्थियों के अध्यापन से शिक्षकों को भी इस क्षेत्र में कार्य करने का अवसर मिलेगा।
3. प्रस्तुत शोध कार्य इस स्तर के विद्यार्थियों में सीखने का वातावरण निर्मित कर नई सूचना प्रदान करने तथा पहले से सीखे हुए ज्ञान को मिलाकर नया विषय सीखने का ज्ञान उत्पन्न कर सकेंगे ।
4. प्रस्तुत शोध कार्य इस स्तर के विद्यार्थियों में पढने व सीखने की मूलभूत क्षमताओं का विकास करेगा।
5. इस अध्ययन से प्राप्त परिणाम विद्यार्थियों में सीखने की प्रक्रिया में अच्छी अध्ययन आदत के विकास को सुनिश्चित करेगा।
6. प्रस्तुत शोध कार्य के परिणामों से अवगत होकर अभिभावक अपने बच्चो की अध्ययन आदतों को जानने हेतु प्रेरित होगें।

संदर्भ

1. अध्यापक साथी (2009): संस्करण –1 राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद, (सितम्बर से दिसम्बर)
2. सोनपिपरे, 'छाया' (2013) "किशोर बालकों की चिन्ता एव अध्ययन आदत का उनकी विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन" पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) विश्वविद्यालय छत्तीसगढ़ विलासपुर पृ.क्र. 46–56।

3- Nandita & S. Tanima (2004), Study Habits and Attitude towards Studies in Relation to Academic Achievement, Psycho-Lingua 2004, 34 (1): 57-60., Psycholinguistic Association of India.

4- Aluja, A., & Blanch, A. (2004). Socialized Personality, Scholastic Aptitudes,

खण्डवा ज़िले के पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन

– अशोक कुमार नेगी

कक्षा पहली से आठवीं तक के विद्यार्थियों के मूल्यांकन हेतु सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन (सी.सी.ई.) प्रक्रिया के लिए मध्यप्रदेश स्कूल शिक्षा विभाग द्वारा जारी वर्तमान निर्देश सन् 2011–12 से लगातार एक से ही हैं। समस्त शासकीय व अशासकीय पाठशालाओं में समूचे सत्र के दौरान विद्यार्थियों के शैक्षिक, सह–शैक्षिक, व्यक्तिगत एवं सामाजिक गुण सम्बन्धी गतिविधियों का अवलोकन एवं मूल्यांकन इन्हीं दिशानिर्देशों के अनुसार किया जाता है। पाठशालाओं में इन गतिविधियों के संचालन पर आधारित अभिलेख संधारण भी किया जाता है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के दूसरे अध्याय के सेक्शन–9 (डी,सी,एच) में विद्यार्थियों के अवलोकन एवं मूल्यांकन से संबंधित सभी रिकार्ड संकलित करने एवं उन्हें सुरक्षित रखने का प्रावधान किया गया है।

प्रस्तुत शोध कार्य में पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन कर तत्संबंधित समस्याओं के निराकरण हेतु आवश्यक सुझाव दिये गये हैं, जिसका लाभ शिक्षकों एवं शिक्षा से सरोकार रखने वाले अन्य सभी लोगों को मिल सकेगा।

समस्या कथन

शैक्षिक प्राणली में मूल्यांकन की महत्वपूर्ण भूमिका है। सटीक मूल्यांकन से छात्रों के सम्यक विकास की प्रक्रिया सही दिशा में संचालित होती है। पर सटीक मूल्यांकन बेहतर समझ की मांग करता है। यह मूल्यांकन प्रक्रिया के साथ–साथ मूल्यांकन के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण पर भी निर्भर करता है। अतएव इस शोध कार्य का समस्या कथन ''पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन'' है।

शोध उद्देश्य

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति छात्रों एवं अभिभावकों में प्रारम्भ से ही एक हद तक असहजता का भाव रहा है। इस प्रक्रिया के कारण कक्षा में छात्रों की सक्रियता, उनकी कुल उपलब्धि में बढ़ोतरी आदि निश्चित ही अध्ययन के विषय हैं। पर इस शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला तथा पुरुष शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना है जो कि इस प्रक्रिया के सफल क्रियान्वयन की मुख्य धुरी है।

शोध सीमाएं

प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श के रूप में खण्डवा जिले के सभी सात विकासखण्डों को शामिल किया गया है।

न्यादर्श का चयन प्रत्येक विकासखण्ड के पूर्व माध्यमिक विद्यालयों से किया गया है प्रत्येक शासकीय पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में से दो शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में लिया है।

पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला तथा पुरुष शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में लिया है।

शोध परिकल्पना

पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला तथा पुरुष शिक्षकों का सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति दृष्टिकोण मध्यमान में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोधकार्य सर्वेक्षण विधि के माध्यम से किया गया है।

शोध न्यादर्श

प्रस्तुत शोधकार्य हेतु खण्डवा जिले के सभी 7 विकासखण्डों में से यादृच्छिक विधि द्वारा शासकीय विद्यालयों का चयन इस प्रकार किया गया है कि विद्यालयों में कार्यरत महिला तथा पुरुष शिक्षकों वाले विद्यालय चयनित हो सकें। इस प्रकार कुल 54 विद्यालय चयनित किये गये और प्रत्येक विद्यालय से एक महिला एवं एक पुरुष शिक्षक को लिया गया और इस प्रकार शोध न्यादर्श के रुप में कुल 108 शिक्षकों का चयन किया गया।

शोध उपकरण

शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित मतावली के माध्यम से सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन सम्बन्धी गतिविधियों यथा पठन–पाठन सामग्री, बच्चों द्वारा किए गए कार्य आदि के अवलोकन एवं कार्य उपलब्धि प्रदर्शन विषयक कथनों के उत्तर प्राप्त किये गये जो कि शोध के उद्देश्य पूर्ति में सहायक है। इस स्वनिर्मित मतावली अध्ययन से संबंधित कुल 15 कथनों को शामिल किया गया।

शोध सांख्यिकी

प्रस्तुत शोधकार्य हेतु प्रतिशत, मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–परीक्षण जैसे शोध उपकरणें का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं सारणीयन

शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित मतावली के माध्यम से सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन सम्बन्धी कथनों के उत्तर प्राप्त कर कथनों का विश्लेषण एवं सारणीयन इस प्रकार किया गया है –

सारणी 1

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन (C.C.E.) के प्रति महिला तथा पुरुष शिक्षकों का अभिमत

पठन–पाठन सामग्री एवं अभिलेख संधारण सम्बन्धी कथन – कथन क्र0 1 (i to v)

कथन क्र0		N=56		N=52		N=108	
1	सी.सी.ई. के संचालन में विद्यालय सपोर्ट सम्बन्धी कथन	अभिमत महिला शिक्षक		अभिमत पुरुष शिक्षक		शिक्षक अभिमत योग	
		सहमत	प्रतिशत	सहमत	प्रतिशत	सहमत	प्रतिशत
i	सी.सी.ई. के उद्देश्यों को प्रभावी बनाने हेतु विभाग द्वारा उपलब्ध करवायी गयी सामग्री से सहायता प्राप्त करना आसान है।	48	86	42	81	90	83
ii	सी.सी.ई. सम्बन्धित निर्देश/सूचनाएं समय पर प्राप्त हो जाते हैं।	52	93	47	90	99	92
iii	पाठशाला में सी.सी.ई. सम्बन्धित समस्त अभिलेख नियत अवधि में संधारित एवं अद्यतन (Update) हो जाते हैं।	46	82	41	79	87	81
iv	पाठशाला में सी.सी.ई. से सम्बन्धित समस्त अभिलेख संधारण हेतु पर्याप्त सुविधा उपलब्ध है।	50	89	39	75	89	82
v	सी.सी.ई. सम्बन्धित समस्त अभिलेख नियत समय पर अवलोकन हेतु उपलब्ध हो जाते हैं।	46	82	42	81	88	81
	अभिमत योग	242		211		453	
	अभिमत औसत प्रतिशत पूर्णांक में		86		81		84

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि –

1. 86 प्रतिशत महिला एवं 81 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 83 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि सी.सी.ई. के उद्देश्यों को प्रभावी बनाने हेतु विभाग द्वारा उपलब्ध करवायी गयी सामग्री से सहायता प्राप्त करना आसान है।
2. 93 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 90 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 92 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सतत् और व्यापक मूल्यांकन (सी.सी.ई.) सम्बन्धित निर्देश/सूचनाएं समय पर प्राप्त हो जाते हैं।

3. 82 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 79 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 81 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई. सम्बन्धित समस्त अभिलेख नियत अवधि में संधारित एवं अद्यतन (Update) हो जाते हैं।

4. 89 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 75 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 82 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई. से सम्बन्धित समस्त अभिलेख संधारण हेतु पर्याप्त सुविधा उपलब्ध है।

5. 82 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 81 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 81 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई. सम्बन्धित समस्त अभिलेख नियत समय पर अवलोकन हेतु उपलब्ध हो जाते हैं।

पठन–पाठन सामग्री एवं अभिलेख संधारण सम्बन्धी कथन से प्राप्त अभिमतानुसार औसतन 86 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 81 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल औसतन 84 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई सम्बन्धित पठन–पाठन सामग्री एवं अभिलेख संधारण सम्बन्धी कथन के पक्ष में हैं।

सारणी 2

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन **(C.C.E.)** के प्रति
महिला तथा पुरुष शिक्षकों का अभिमत
कार्य उपलब्धि प्रदर्शन सम्बन्धी कथन क्र0 2 (i to v)

कथन क्र.		N=56		N=52		N=108	
2	कार्य उपलब्धि प्रदर्शन सम्बन्धी कथन	अभिमत महिला शिक्षक		अभिमत पुरुष शिक्षक		शिक्षक अभिमत योग	
		सहमत	प्रतिशत	सहमत	प्रतिशत	अभिमत	प्रतिशत
i	पाठशाला में सी.सी.ई. के अन्तर्गत गतिविधियों में बच्चों की कार्य उपलब्धि को नियमित डिस्प्ले किया जाता है।	46	82	39	75	85	79
ii	शिक्षण में सी.सी.ई. अन्तर्गत, शिक्षकों की कार्य उपलब्धि को पाठशाला में नियमित डिस्प्ले किया जाता है।	44	79	38	73	82	76
iii	सी.सी.ई. के माध्यम से प्राप्त जानकारी/ आंकड़े/अभिलेख इत्यादि, पालकों के साथ आसानी से सांझा किए जाते हैं।	38	68	35	67	73	68
iv	बच्चों के सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में विद्यालय प्रबन्धन समिति (एस.एम.सी.) बैठक में पालकों के विचार अभिव्यक्ति को उचित स्थान दिया जाता है।	46	82	45	87	91	84
v	पाठशाला में पालकों के योगदान या सकारात्मक कार्य को डिस्प्ले किया जाता है।	32	57	33	63	65	60
	अभिमत योग	206		190		396	73
	औसत प्रतिशत (पूर्णांक में)		74		73		73

उपर्युक्त सारणी क्रमांक 2 से स्पष्ट होता है कि –

1. 82 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 75 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 79 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई के अन्तर्गत गतिविधियों में बच्चों की कार्य उपलब्धि को नियमित डिस्प्ले किया जाता है।

2. 79 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 73 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 76 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि शिक्षण में सी.सी.ई के अन्तर्गत, शिक्षकों की कार्य उपलब्धि को पाठशाला में नियमित डिस्प्ले किया जाना किया जाता है।

3. 68 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 67 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 68 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि सी.सी.ई. के माध्यम से प्राप्त जानकारी / आंकड़े / अभिलेख इत्यादि, पालकों के साथ आसानी से सांझा किए जाते हैं।

4. 82 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 87 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 84 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि बच्चों के सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में विद्यालय प्रबन्धन समिति बैठक में पालकों के विचार अभिव्यक्ति को उचित स्थान दिया जाता है।

5. 57 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 63 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 60 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में पालकों के योगदान या सकारात्मक कार्य को डिस्प्ले किया जाता है।

सी.सी.ई. के संचालन में कार्य उपलब्धि प्रदर्शन सम्बन्धी कथन से प्राप्त अभिमतानुसार औसतन 74 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 73 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल औसतन 73 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई. के संचालन में कार्य उपलब्धि प्रदर्शन सम्बन्धी कथन के पक्ष में हैं।

सारणी 3

महिला तथा पुरुष शिक्षकों का अभिमत

बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन सम्बन्धी कथन क्र. 8 (i to v)

कथन क्र0		N=56		N=52		N=108	
3	बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन सम्बन्धी कथन	अभिमत महिला शिक्षक		अभिमत पुरुष शिक्षक		शिक्षक अभिमत योग	
		सहमत	प्रतिशत	सहमत	प्रतिशत	अभिमत	प्रतिशत
i	विद्यार्थियों के विकास के लिए सी.सी.ई. के अन्तर्गत बच्चों द्वारा किए गए कार्य/गतिविधियों (शैक्षिक व सहशैक्षिक क्षेत्रों तथा व्यक्तिगत–सामाजिक गुणों सम्बन्धी) का अवलोकन शिक्षक करते है।	49	88	45	87	94	87
ii	सी.सी.ई. के अन्तर्गत बच्चों द्वारा किए गए कार्य/गतिविधियों का अवलोकन पालक द्वारा किया जाता है।	28	50	23	44	51	47
iii	सी.सी.ई. की वर्तमान मूल्यांकन प्रक्रिया शिक्षकों को स्वमूल्यांकन के अवसर प्रदान करता है।	51	91	45	87	96	89
iv	विशेष आवश्यकता वाले बच्चों/दिव्यांग बच्चों को सी.सी.ई. निर्देशित सुविधाएँ उपलब्ध करवा पाते हैं।	27	48	29	56	56	52
v	दिव्यांग बच्चों के लिए पाठशाला में विशेष शिक्षण की व्यवस्था उपलब्ध होती है।	16	29	18	35	34	31
	अभिमत योग	171		160		331	
	अभिमत औसत प्रतिशत (पूर्णांक में)		61		62		61

उपरोक्त सारणी क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि –

1. 88 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 87 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 87 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि विद्यार्थियों के विकास के लिए सी.सी.ई. के अन्तर्गत बच्चों द्वारा किए गए कार्य/गतिविधियों (शैक्षिक व सहशैक्षिक क्षेत्रों तथा व्यक्तिगत–सामाजिक गुणों सम्बनधी) का अवलोकन शिक्षक करते है।
2. 50 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 44 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 47 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि सी.सी.ई. के अन्तर्गत बच्चों द्वारा किए गए कार्य/

गतिविधियों का अवलोकन पालक द्वारा किया जाता है।

3. 91 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 87 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 89 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि सी.सी.ई. की वर्तमान मूल्यांकन प्रक्रिया शिक्षकों को स्वमूल्यांकन के अवसर प्रदान करता है।

4. 48 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 56 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 52 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि विशेश आवश्यकता वाले बच्चों/दिव्यांग बच्चों को सी. सी.ई. निर्देशित सुविधाएँ उपलब्ध करवा पाते हैं।

5. 29 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 35 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल 31 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि दिव्यांग बच्चों के लिए पाठशाला में विशेष शिक्षण की व्यवस्था उपलब्ध होती है।

सी.सी.ई. के तहत् विद्यालय में बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन सम्बन्धी कथनों से प्राप्त अभिमतानुसार औसतन 61 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 62 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल औसतन 61 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत सी.सी.ई. के तहत् विद्यालय में बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन सम्बन्धी कथन के पक्ष में है। अर्थात् विद्यालय में सी.सी.ई. के तहत् बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन निर्देशानुसार होता है।

परिणामों की व्याख्या

सारणी क्रमांक 1, 2 व 3 से स्पष्ट है कि –

- पठन–पाठन सामग्री एवं अभिलेख संधारण सम्बन्धी कथन से प्राप्त अभिमतानुसार औसतन 86 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 81 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल औसतन 84 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई. सम्बन्धित पठन–पाठन सामग्री एवं अभिलेख संधारण सम्बन्धी कथन के पक्ष में हैं।
- सी.सी.ई. के संचालन में कार्य उपलब्धि प्रदर्शन सम्बन्धी कथन से प्राप्त अभिमतानुसार औसतन 74 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 73 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल औसतन 73 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पाठशाला में सी.सी.ई. के संचालन में कार्य उपलब्धि प्रदर्शन सम्बन्धी कथन के पक्ष में हैं।
- सी.सी.ई. के तहत् विद्यालय में बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन सम्बन्धी कथन से प्राप्त अभिमतानुसार औसतन 61 प्रतिशत महिला शिक्षकों एवं 62 प्रतिशत पुरुष शिक्षकों अर्थात् कुल औसतन 61 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत सी.सी.ई. के तहत् विद्यालय में बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन सम्बन्धी कथन के पक्ष में हैं। अर्थात् विद्यालय में सी.सी.ई. के तहत् बच्चों द्वारा किए गए कार्य अवलोकन निर्देशानुसार होता है।

परिकल्पनाओं का सत्यापन

पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों तथा पुरुष शिक्षकों का सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति दृष्टिकोण मध्यमान में सार्थक अन्तर नही है।

सारणी 4

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति महिला शिक्षकों तथा पुरुष शिक्षकों का दृष्टिकोण मध्यमान

Gender	न्यादर्श का आकार (N)	मध्यमान (MEAN)	प्रमाणिक विचलन (SD)	स्वतंत्रता अंश (DF)	गणना से प्राप्त टी का मान (T- value)	सार्थकता स्तर	मान
Female	56	41.26	10.7	106	0.28	.01	2.63
Male	52	37.4	8.47			.05	1.98

आरेख 1

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति महिला शिक्षकों तथा पुरुष शिक्षकों का दृष्टिकोण मध्यमान सम्बन्धी

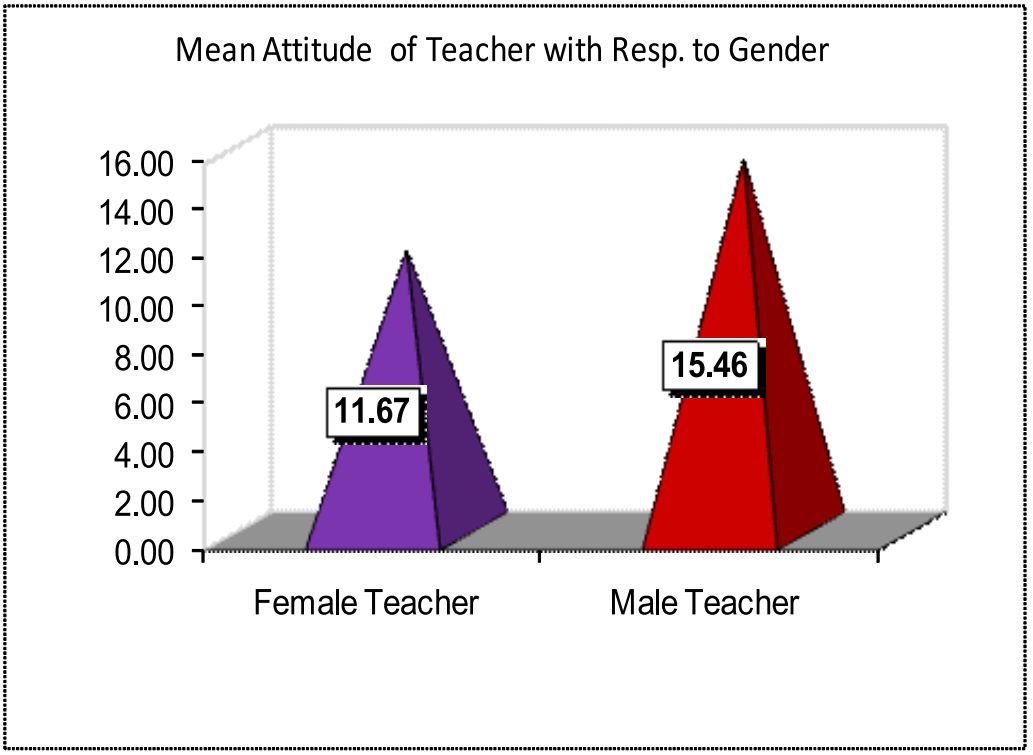

अर्थापन (Interpretation)

गणना द्वारा प्राप्त टी का मान 0.28 है और इसकी सार्थकता के लिये टी का स्वतंत्रता अंश डी.एफ. = 106 है ।

टी तालिका में स्वतंत्रता अंश डी.एफ. = 106 पर स्तर .01 मान 2.63 है तथा स्तर .05 मान 1.98 है।

गणना द्वारा प्राप्त टी का मान 0.28 डी.एफ. = 106 पर टी तालिका के दोनों मान से कम है।

अतः हमारे द्वारा ली गई परिकल्पना –

"पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों तथा पुरुष शिक्षकों का सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति दृष्टिकोण मध्यमान में सार्थक अन्तर नही है।" स्वीकृत होती है।

अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि ''पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों तथा पुरुश शिक्षकों का सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नही है।'' परिकल्पना की पुष्टि होती है।

सुझाव

शिक्षकों से प्राप्त अमूल्य सुझाव इस प्रकार है –

1. बच्चों की पाठशाला में नियमित उपस्थिति सुनिश्चित करवाने के लिए सतत् बालक–पालक सम्पर्क हेतु शिक्षक/संस्था प्रभारी व एस.एम.सी. सदस्य तथा सक्रिय जनप्रतिनिधि के द्वारा पहल की जाये। नियमित बालक–पालक सम्पर्क, सम्पर्क हेतु टाईम टेबल (दैनिक/साप्ताहिक/पाक्षिक/मासिक/त्रैमासिक) एवं पालक सम्पर्क पंजी संधारित की जाये।
2. बच्चों की पाठशाला में नियमित उपस्थिति सुनिश्चित करवाने के लिए प्रत्येक विद्यालय में कम से कम 02 नियमित शिक्षकों की नियुक्ति तत्काल करें जिसमें महिला शिक्षक को प्राथमिकता दी जाये।
3. प्रत्येक विद्यालय मे नियमित प्रधानाध्यापक की पोस्टिंग भी की जाये।

4. पालकों में शिक्षा के प्रति रुचि जागृत करवाने के लिए सतत शिक्षक/संस्था प्रभारी व एस.एम.सी. सदस्य तथा सक्रिय जनप्रतिनिधि के द्वारा पहल की जाये।
5. साहित्यिक, सांस्कृतिक, सृजनात्मक व खेल–कूद गतिविधियों के संचालन स्थान व खेल मैदान की व्यवस्था व प्रत्येक विद्यालय में इसकी उपलब्धता सुनिश्चित की जाये। इसी प्रकार प्रत्येक विद्यालय में एक बड़ा हाल गतिविधियों के संचालन एवं बच्चों के प्रस्तुतिकरण हेतु सुरक्षित बनाया जाये।

संदर्भ

1. डॉ. शर्मा. आर.ए. (2011) – शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।
2. राज्य शिक्षा केन्द्र, भोपाल द्वारा प्रकाशित – सतत्–व्यापक मूल्यांकन हेतु दिशा निर्देश 2010–11 व 2011–12 (मध्य प्रदेश शासन स्कूल शिक्षा विभाग)।
3. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 – राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।
4. शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 – भारत शासन का राजपत्र।
5. प्रशिक्षण मॉड्युल – 2011 (सामर्थ्य)।
6. माथुर, डॉ. एस.एस., (1995) ''शिक्षक तथा माध्यमिक शिक्षा'', आगरा : लायल बुक डिपो।
7. भटनागर, ए.बी., (1992) ''मापन एवं मूल्यांकन'', मेरठ : आर. लाल बुक डिपो।

सभी धर्मों के समान आदर का राज

बापू के जीवन में झांका जाए तो उनके सबसे पहले दो गुरु थे, उनकी मां पुतलीबा और पिता कर्मचन्द। मॉ से उन्होंने सत्य, त्याग और संयम सीखा। पास आकर धार्मिक मुददों पर चर्चा करने वाले पारसी, मुस्लिम, ईसाई और हिन्दू धर्म के धर्मगुरुओं के विमर्श से सभी धर्मों का मर्म जाना। यही कारण है कि मोहनदास ने बचपन से अपने धर्म से प्रतिबद्ध रहने के बावजूद दूसरे धर्मों का समान आदर करना सीखा।

वक्त की मांग है लैंगिक समानता

मोनिका शर्मा

महिलाएं समाज और परिवार की धुरी हैं, लेकिन उनके साथ दोयम दर्जे के व्यवहार की समस्या अभी भी बरकरार है। समानता का इंसानी हक आज भी आधी आबादी को सही तरह से हासिल नहीं हुआ है। भारत ही नहीं दुनियाभर में स्त्रियां अपनी पहचान बनाने को जूझ रही हैं। उनके इस संघर्ष में सबसे बड़ी बाधा लैंगिक असमानता है। पुरूषों और महिलाओं के बीच मौजूद असमानता की खाई आधी आबादी के लिए दंश बनी हुई है। गैर बराबरी की सोच और व्यवहार से आधी आबादी को घर से लेकर दफ्तर तक हर जगह दो – चार होना पड़ता है। एक अध्ययन के अनुसार भारत ही नहीं दुनियाभर में बढ़ती आर्थिक असमानता से सबसे ज्यादा लड़कियां और महिलाएं प्रभावित हो रही हैं। शायद यही वजह है कि इस साल महिला दिवस के लिए यूएन की थीम भी इसी विषय को संबोधित है – 'थिंक इक्वल, बिल्ड स्मार्ट, इनोवेट फॉर चेंज।' इस थीम का उद्देश्य ऐसे प्रयासों को बल देना है जिनसे लैंगिक समानता आए, महिलाएं सशक्त और आत्मनिर्भर बनें। इनोवेशन और टेक्नोलॉजी से जुड़े क्षेत्रों में स्त्रियों की भागीदारी बढ़ाने का विचार लिए इस थीम का लक्ष्य कामकाजी आबादी में महिलाओं की हिस्सेदारी में इजाफा करना है ताकि यूएन द्वारा 2030 तक तय किया गया लक्ष्य प्लेनेट 50 – 50 हासिल किया जा सके। प्लेनेट 50 – 50 का मकसद है एक ऐसी दुनिया बनाना जिसमें पुरूष और महिलाएं बराबर का हक रखें। इसका एक अन्य उद्देश्य लैंगिक समानता स्थापित करना भी है। हालांकि इस बदलाव के लिए हर स्तर पर प्रयास किए जाने आवश्यक हैं, लेकिन लैंगिक समानता की बुनियाद बनाने के लिए समाज और परिवार की भूमिका सबसे अहम है।

तमाम तरक्की के बावजूद परंपरागत रूप से हमारे समाज में महिलाओं को अभी भी कमजोर वर्ग के रूप में देखा जाता है और उनकी भागीदारी को कम करके आंका जाता है। नतीजतन घर और दफ्तर, दोनों जगहों पर महिलाएं उपेक्षा, शोषण, अपमान और भेदभाव को झेलने के लिए विवश होती हैं। महिलाओं के प्रति भेदभाव का यह व्यवहार दुनिया के हर हिस्से में मौजूद है कहीं कम तो कहीं ज्यादा। विश्व आर्थिक मंच की लैंगिक अंतराल रिपोर्ट – 2018 में 144 देशों की सूची में भारत 108 वें पायदान पर पाया गया। यह मंच स्त्री–पुरूष असमानता को चार मुख्य मानकों आर्थिक अवसर, राजनीतिक सशक्तीकरण, शैक्षणिक उपलब्धियां और स्वास्थ्य एवं उत्तरजीविता के आधार पर तय करता हैं। यही वे मानक हैं जो किसी भी देश की महिलाओं का स्वतंत्र अस्तित्व गढ़ने और उसे कायम रखने का आधार बनते हैं और उन्हें स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर बनाते हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार वैश्विक स्तर पर लैंगिक अंतराल को 68 फीसदी तक कम किया गया है। इस रिपोर्ट में भारत में कन्या भ्रूण

हत्या, महिला साक्षरता और मातृ मृत्यु दर जैसे कारणों को महिलाओं के सशक्तीकरण और समानता से जुड़े चिंतनीय पहलुओं की फेहरिस्त में रखा गया है। विश्व आर्थिक मंच के इस अध्ययन में चेतावनी देते हुए कहा गया है कि जिस हिसाब से असमानता दूर करने के लिए प्रयास हो रहे हैं उन्हें देखते हुए पूरी दुनिया में सभी क्षेत्रों में महिला – पुरूष असमानता को अगले 108 साल तक दूर नहीं किया जा सकता। चूंकि कार्यस्थलों पर गैर–बराबरी की खाई बहुत ज्यादा गहरी है इसलिए उसे पाटने में 200 वर्ष तक लग सकते हैं। यह परिदृश्य वाकई चिंतनीय हैं। एक कटु सच यह भी है कि महिलाओं के प्रति भेदभाव और शोषण के बुनियादी कारण हमारे सामाजिक ढ़ांचे में ही मौजूद हैं। इनका निवारण सिर्फ आर्थिक आत्मनिर्भरता या प्रशासनिक कार्ययोजनाओं के माध्यम से नहीं खोजा जा सकता।

भारत में जिस तरह का पांरपरिक सामाजिक ढ़ांचा है उसमें केवल सरकारी योजनाएं और कानून महिलाओं को सशक्त नहीं बना सकते। असमानता के दंश से मुक्ति पाने के लिए समाज की सोच में भी बदलाव की जरूरत है। इस जरूरत की पूर्ति इसलिए की जानी चाहिए, क्योंकि महिलाओं का उत्थान और उनका सशक्तीकरण परिवार और समाज की बेहतरी में ही सहायक बनेगा। देश के सर्वांगीण विकास के लिए भी हर क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ना जरूरी है। हमारे देश में सबसे ज्यादा बदलाव की दरकार समाज में मौजूद परंपराओं और रूढ़ियों को लेकर है। बेटे और बेटी में किए जाने वाले भेद की मानसिकता के चलते आज भी दूर–दराज के गांवों में बेटियों की शिक्षा और उनके स्वास्थ्य को महत्व नहीं दिया जाता। आज भी हमारे परिवारों में महिलाओं के प्रति होने वाली हिंसा को व्यवस्थागत समर्थन मिलता है। महिलाओं के सम्मान और सुरक्षा के मोर्चे पर तो अनगिनत चिंताएं हैं ही, घरेलू हिंसा, दहेज, कन्या भ्रूण हत्या और बाल विवाह जैसे दंश भी बेटियों के जीवन के दुश्मन बने हुए हैं। सबसे खराब बात यह है कि सार्वजनिक स्थलों में महिलाएं खुद को सुरक्षित नहीं पाती। यह स्थिति सभ्य समाज के लिए कलंक की तरह है। वे कैसे हर जगह स्वयं को सुरक्षित महसूस करें, इसकी चिंता हर किसी को करनी चाहिए। यह चिंता करना केवल सरकार का काम नहीं।

अनगिनत विरोधाभासों से जूझते हुए महिलाएं हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही हैं। सशक्त बनने के मोर्चे पर आधी आबादी ने साबित किया है कि वे स्वयसिद्ध हैं। आज जब वे जीवन के हर क्षेत्र में खुद को साबित कर रही हैं तब यह देखना पीड़ादायी है कि तमाम क्षमता और योग्यता के बावजूद उन्हें कम करने आंकने की सोच समाप्त होने का नाम नहीं ले रही है। लैंगिक समानता भारतीय संविधान के मूल तत्वों में समाहित है। भेदभाव विरोधी तमाम कानूनी प्रावधान भी मौजूद हैं, फिर भी महिलाएं दोयम दर्जे का व्यवहार झेलने को मजबूर हैं।

आज की उदारीकृत व्यवस्था में महिलाएं श्रम शक्ति का एक बड़ा हिस्सा जरूर हैं, लेकिन वे उपेक्षा और शोषण की शिकार भी बन रही हैं। राजनीतिक भागीदारी से लेकर हर

क्षेत्र की वर्कफोर्स में उनके बढ़ते दखल के बावजूद शिक्षा, स्वास्थ्य और आर्थिक मोर्चे पर पीछे रह जाने का कारण उनका महिला होना ही है। लैंगिक असमानता के चलते ही अस्मिता और सामाजिक सम्मान से जुड़े सरोकार के संघर्ष में महिलाएं आज भी खूद अकेले पाती हैं। एक लोकतंत्रिक देश की नागरिक होने के नाते सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन जीने के लिए लैंगिक असमानता को दूर करना आवश्यक है। बराबरी का यह भाव स्त्री अस्मिता ही नहीं मानवीय मूल्यों से भी जुड़ा है, जो हमारी सामाजिक – पारिवारिक व्यवस्था की दशा और दिशा तय करता है। कुल मिलाकर आज यह समझना कहीं अधिक जरूरी है कि समाज और परिवार को लैंगिक समानता की बुनियाद बनना चाहिए।

गांधी जी दक्षिण अफ्रीका से पहली बार भारत आऐ थे। वे पूना में सभा करना चाहते थे तो लोकमान्य तिलक ने कहा कि मैं अगर सभा बुलाऊँगा तो गोखले के लोग नहीं आऐंगे। तुम भंडारकर या किसी और को कहो ताकि मेरे और उनके दोनों लोग आ सकें। इतना ध्यान रखते थे वे लोग एक दूसरे का। तिलक चाहते थे कि गोखले के लोगों को भी गांधी की बात सुननी चाहिए। आज राजनीति में मतभेद यानि दुश्मनी मान ली गई है।

– गांधी दर्शन से

नागरिकता देश की सेवा में निहित होती है।

– पं. जवाहर लाल नेहरु

सार्वभौमिक राष्ट्र के निर्माण, जिसमें अस्मिताओं और विविधताओं का सहअस्तित्व हो, के द्वारा ही अन्तर्राष्ट्रीय कार्यसूची को प्रभावी तरीके से लागू एवं विकसित किया जा सकता है।

– समाजशास्त्री एन्थोनी गिडेन्स के भाषण 'द नेशन – स्टेट इन द ग्लोबल एज' से

बिना प्रयास का धन व्यक्ति को दिशाहीन व आलसी बना देता है। ऐसा व्यक्ति समाज व देश दोनों के लिए अहितकारी है। मेरे लिए इसकी अब कोई कीमत नहीं।

– सन्त रविदास

रोजगार का संकट

संतोष मेहरोत्रा

शिक्षित बेरोजगारी की स्थिति भयावह हो गई है, क्योंकि युवाओं को बेहतर शिक्षा मिल रही है और वे कृषि की जगह उद्योगों और सेवा क्षेत्र में नौकरी करना चाहती हैं। यह नतीजा श्रम ब्यूरो के सालाना सर्वे के आकलन में सामने आया। इसमें ग्रामीण और शहरी, संगठित और असंगठित दोनों क्षेत्रों के रोजगार शामिल हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो इसमें ईपीएफओ/एनपीएस (संगठित) के साथ–साथ ऐसे रोजगार भी हैं, जो मुद्रा लोन या दूसरे उपायों से पैदा हो सकते हैं। बाद के दोनों स्रोत ठीक वही हैं, जिन्हें लेकर सरकार का ठीक–ठीक यही दावा हैं कि रोजगार के जो आंकड़े हैं, उसमें इन दोनों को शामिल नहीं किया गया है। सरकार का दावा है कि रोजगार को लेकर पर्याप्त 'अच्छे' आंकड़े नहीं हैं। लेकिन सरकार के इस दावे को बिल्कुल नहीं माना जा सकता है।

एनएसएसओ के ताजा श्रम बल (लेबर फोर्स) सर्वे (पीएलएफएस 2017–18) के हालिया आंकड़ों में रोजगार/बेरोजगारी की उसी प्रश्नावली और परिभाषा का उपयोग किया गया है, जो एनएसएसओ के पहले के सर्वे में होते थे। एनएसएसओ के 2017–18 के आंकड़ों से साफ है कि वास्तव में रोजगार की स्थिति और भी विकट रही। 2011–12 के बाद खुली बेरोजगारी यानी ऐसी स्थिति जब लोगों के पास करने के लिए कोई काम न हो, की दर बढ़ी है। आंकड़ों से पता चलता है कि 1973–74 और 2011–12 के बीच खुली बेरोजगारी दर कभी भी 2.6 फीसद से अधिक नहीं थी। अब 2017–18 में यह बढ़ कर 6.1 फीसद हो गई। यह बिल्कुल आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि देश में पिछले दस–बारह वर्षों में अधिक से अधिक युवा शिक्षित हुए हैं। इस अवधि में उच्च शिक्षा में नामांकन दर (18–23 वर्ष के लिए) 2006 की ग्यारह फीसद से बढ़ कर 2016 में छब्बीस फीसद हो गई। पंद्रह से सोलह वर्ष के बच्चों की सकल माध्यमिक (कक्षा नौ और दस के लिए) नामांकन दर 2010 में अट्ठावन फीसद से बढ़ कर 2016 में नब्बे फीसद हो गई। ऐसे युवा खेतों के बजाय शहरों में किसी उद्योग या सेवा क्षेत्र में नियमित नौकरी की उम्मीद करते हैं। अगर उनके पास इस स्तर तक की शिक्षा हासिल करने के वित्तीय साधन हैं, तो वे बेरोजगार रहने का जोखिम भी उठा सकते हैं। गरीब लोग जो बहुत कम पढ़े–लिखे हैं, उनके पास ऐसी बेरोजगारी को झेलने की क्षमता और कम होती है। यही वजह है कि उनकी बेरोजगारी की दर कम है।

हालिया आंकड़ों से यह भी पता चलता है कि जैसे–जैसे खुली बेरोजगारी दर बढ़ती है, तो श्रम बल से बाहर होने वाले अधिक लोग निराश होते जाते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो वे काम की तलाश बंद कर देते हैं। भले ही उनकी उम्र (पंद्रह सल से अधिक) काम करने की

होती है। इसीलिए सभी उम्र के लोगों के श्रम बल की भागीदारी दर 2004–05 में 43 फीसद से घट कर 2011–12 में 39.5 फीसद और 2017–18 में 36.9 फीसद हो गई थी। इस सबके बीच सरकार के अर्थशास्त्रियों की ओर से बार–बार कहा जाता है कि रोजगार को लेकर कोई संकट नहीं है। हाल तक प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद् के एक सदस्य ने भी अपने रोजगार आकलन के आधार पर दोहराया था कि रोजगार की धीमी वृद्धि के बारे में चिंता करने की जरूरत नहीं है।

वर्ष 2011–12 तक खुली बेरोजगारी का आंकड़ा लगभग एक करोड़ था, लेकिन 2015–16 तक यह बढ़ कर 1.65 करोड़ हो गया। 2011–12 के बाद इसमें वृद्धि से पता चलता है कि इस अवधि से पहले जो लोग स्कूली शिक्षा हासिल कर रहे हैं, वे गैर–कृषि क्षेत्र में रोजगार की तलाश करेंगे, लेकिन रोजगार नहीं मिलेगा। हालिया आंकड़ों से पता चलता है कि 2017–18 तक यह स्थिति और बदतर हो गई। इससे भी बदतर स्थिति यह है कि इससे शिक्षितों की बेरोजगारी दर में तेज वृद्धि (वार्षिक सर्वे, श्रम ब्यूरो के अनुमानों के आध ाार पर) का पता चलता है। माध्यमिक शिक्षा हासिल करने वालों की बेरोजगारी दर 2011–12 में 0.6 फीसद से बढ़ कर 2016 में 2.4 फीसद हो गई। इसी अवधि में दसवीं की शिक्षा हासिल करने वालों की बेरोजगारी दर 1.3 फीसद से 3.2 फीसद, बारहवीं पास की दो फीसद से 4. 4 फीसद, स्नातकों की 4.1 फीसद से बढ़ कर 8.4 फीसद और स्नातकोत्तर की बेरोजगारी दर 5.3 फीसद से बढ़ 8.5 फीसद हो गई। इससे भी अधिक चिंताजनक बात यह है कि तकनीकि शिक्षा हासिल करने वाले स्नातकों की बेरोजगारी दर 6.9 से 11 फीसद, स्नातकोत्तरों की 5.7 फीसद से 7.7 फीसद और व्यवसायिक रूप से प्रशिक्षितों की 4.9 फीसद से बढ़ कर 7.9 फीसद हो गई। यानी आप जितना अधिक शिक्षित हैं उतना ही बेरोजगार रहने की संभावना है।

भारत के आर्थिक इतिहास में 2004–05 और 2011–12 के दौरान कृषि में श्रमिकों की संख्या में तेजी से गिरावट आई थी। इसी तरह कृषि क्षेत्र में काम करने वाले युवाओं की संख्या 2004–05 और 2011–12 के बीच गिर कर 8.68 करोड़ से 6.09 करोड़ (या 30 लाख प्रति वर्ष की दर) हो गई। हालांकि, 2012 के बाद 2015–16 तक कृषि में युवाओं की संख्या बढ़ कर 8.49 करोड़ हो गई और यहां तक कि उससे ज्यादा बढ़ गई। हम विकास के जिस दौर में हैं, वैसे में भारत के लिए वास्तव में जो मायने रखता है वह है, गैर–कृषि क्षेत्र में रोजगार में वृद्धि। 2004–05 से 2011–12 के बीच 5.12 करोड़ गैर कृषि रोजगार सृजित हुए, जो बहुत सराहनीय और आशाजनक भी है। जबकि इसके विपरीत, 2012 के बाद 2016–17 तक गैर–कृषि रोजगार केवल 12 लाख प्रतिवर्ष (या कुल 48 लाख) ही सृजित हुए।

सबसे अधिक चिंता की बात यह है कि विनिर्माण (मैन्युफैक्चरिंग) क्षेत्र में रोजेगार 2011 – 12 में 5.89 करोड़ से घट कर 2015–16 में 4.83 करोड़ हो गए, यानी चार साल की

अवधि में 1.6 करोड़ से अधिक रोजगार कम हो गए। औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइआइपी) में वृद्धि लगातार धीमी बनी हुई है। विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार में गिरावट भारतीय अर्थव्यवस्था में गिरावट का संकेत है।

ऐसे युवा (15–19 आयु वर्ग) जो 'रोजगार, शिक्षा और प्रशिक्षण (एनईईटी) में शामिल नहीं हैं, उनकी संख्या 2004–05 में सात करोड़ थी। 2011–12 तक इसमें बीस लाख सालाना के हिसाब से वृद्धि हुई थी। लेकिन दुख की बात है कि इसके बाद 2015–16 तक इसमें पचास लाख प्रति वर्ष के हिसाब से वृद्धि हो रही थी। अगर बाद वाला रूझान जारी रहा (जैसा कि इसके प्रमाण हैं) तो हमारा अनुमान है कि 2017–18 में बढ़ कर यह 11.56 करोड़ हो जाएगा। ये आंकड़े एनईईटी और बेरोजगार युवा भविष्य की श्रम शक्ति को दर्शाते हैं जिसका उपयोग देश के मानव संसाधन विकास को बढ़ाने के लिए किया जा सकता है।

रोजगार की कमी एक वास्तविक संकट है। इसके अलावा, एनईईटी की संख्या सिर्फ चार वर्षों (2011–12 से 2015–16) में दी दो करोड़ से अधिक बढ़ गई है। साथ ही, श्रम शक्ति में वास्तविक वृद्धि एक करोड़ हुई है। सन् 2000 से 2012 के बीच भारत में पचहत्तर लाख रोजगार सृजित हुए थे। अगर हम सही–सही नीतियों पर अमल करें तो आज भी अर्थव्यवस्था उतने ही रोजगार पैदा कर सकती है। चार वर्षों में हर साल कम से कम पचहत्तर लाख नए गैर–कृषि रोजगार सृजित करने चाहिए थे, लेकिन इसने केवल बाईस लाख रोजगार सृजित किए। इसमें कृषि छोड़ने के इच्छुक कृषि श्रमिकों के लिए जरूरी गैर–कृषि रोजगार शामिल नहीं हैं। अगर सरकार रोजगार की समस्या को समझने को तैयार नहीं है, तो इसके समाधान के लिए कुछ करने की शायद ही कोई संभावना है।

अपनी भूख सहने वाले तपस्वी की शक्ति उतनी नहीं होती जितनी कि दूसरे की भूख मिटाने वाले की शक्ति।

– तिरुवल्लुवर

आत्मविश्वास कई प्रकार का होता है। धन का बल का, ज्ञान का, लेकिन मूर्खता का आत्मविश्वास सर्वोपरि होता है।

– हरिशंकर परसाई

स्त्री का हक

निशा नाग

हाल ही में एक विज्ञापन देखा, जिसमें स्त्रियों की भागीदारी का प्रश्न गहराई से उठाया गया था। कथा कुछ इस प्रकार थी – एक पुरूष काम से घर लौटता है तो देखता है कि उसके दोनों बच्चे घर के लॉन में धूल–मिट्टी से सने खेल रहे हैं। उसे देखते ही वे सहम कर एक ओर खड़े हो जाते हैं। जब वह घर में घुसता हैं तो चारों ओर उसे अव्यवस्था दिखाई देती हैं। बच्चों के खिलौने बिखरे हुए हैं, घर की तमाम लाइटें और पंखे चल रहे हैं। नल से पानी टपकता हुआ और सिंक में जूठे बरतनों का ढ़ेर है। अजीब अविश्वास से भर कर और अनहोनी की कल्पना कर वह पत्नी को खोजता हुआ शयन कक्ष की ओर बढ़ता है। दरवाजे की फांक से उसे बिस्तर पर पत्नी के पैर दिखाई देते हैं। वह भयभीत होकर दरवाजे को ठेलता है तो यह देख कर सुकून की सांस लेता है कि पत्नी लैपटॉप पर कुछ देख रही है। वह खीझ कर पूछता – 'यह सब क्या है?' पत्नी का जवाब है – 'कुछ नही, बस तुम रोज–रोज कहते थे न, कि दिन भर घर पर क्या करती हो! तो बस आज कुछ नही किया।'

एक हल्की मुस्कुराहट के साथ स्त्री द्वारा किए जाने वाले भुगतान रहित श्रम का मूल्य वह महिला समझा जाती है। स्त्रियों द्वारा घर के भीतर किए जाने वाले काम की गिनती 'कुछ नही' में ही की जाती रही है। कॉलेज में हर वर्ष प्रवेश लेने वाली न जाने कितनी ही छात्राएं जब मां और पिता द्वारा किए वाले काम का कॉलम भरती हैं तो अक्सर कहती है – 'मम्मी तो कुछ नही करती वे हाउस वाइफ है बस'। मैं मुस्कुरा कर इतना ही कहती हूं – 'इतनी बड़ी ऐसे ही हो गई? बिना मां के कुछ किए?'

पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री चाहे अवैतनिक श्रम करे या वैतनिक, उसकी स्थिति यही है। बिल्कुल निचले पायदान पर खड़ी स्त्री से लेकर ऊपरी पायदान पर खड़ी निन्यानवे प्रतिशत स्त्रियों का यही हाल है। जैसे मजदूरी करने वाली स्त्रियां अक्सर अकुशल श्रमिक ही होती हैं। वे ईंठ–गारा ढ़ोने का काम करती हैं, जिसके लिए उन्हें पुरूष श्रमिकों से कम मजूदरी दी जाती है। किसी काम के दौरान अगर सफाई या झाड़ू लगानी होती है तो भी स्त्रियां ही लगाती हैं। मेरे पूछने पर कि 'फर्श पर बिखरी हुई मिट्टी को कौन साफ करेगा?' तो मिस्त्री साहब ने अपनी कमीज की आस्तीनें चढ़ाते हुए जवाब दिया – 'लेडीज ही साफ करेंगी?' मेरे 'क्यो' का जवाब था – 'लेडीज ही करती है' जबकि स्त्री श्रमिकों की अनुपस्थिति में कोई भी बेलदार झाड़ू लगा देता था।

श्रम के इस विभाजन में यह विषमता हमारी उस सामाजिक संरचना की देन हैं, जहां स्त्री और पुरूष के कार्मों में अंतर किया गया है। जबकि जहां ये काम 'बाजार' से जुड़ते हैं, वहां

यह विभाजन खत्म होता दिखता है। जैसे घर है तो रसोई की जिम्मेदारी स्त्री की है, लेकिन विराट पैमाने पर बड़े होटलों में 'शेफ' पुरूष ही होता है। कई बड़े नाम खाना बनाने की कला के साथ जुड़े हैं। सिलाई करने या पिराने काम स्त्रियों का माना गया है, लेकिन फैशन डिजाइनर या टेलर पुरूष अधिक हैं, स्त्रियां कम। वहां श्रम विभाजन का यह नियम लागू नहीं होता। शाम को किसी मजबूर बस्ती में बनी छोलदारियों के पास से गुजरते हुए मैं एक अजीब से अहसास से भर जाती हूं जब देखती हूं कि दिन भर के काम के बाद पुरूष बैठे हुए ताश खेल रहे हैं या मनोरंजन कर रहे हैं, जबकि स्त्री श्रम भरा दिन गुजारने बाद फिर से परिश्रम कर रही है, चूल्हा सुलगा कर रोटी सेंक रही है। उसे कोई रोटी बना कर नहीं देने वाला। वह रोटी बनाएगी, तभी खा पाएगी। यह सभी जानते हैं कि स्त्रियों द्वारा किया जाने वाला दोहरा श्रम उनकी नियति है। चाहे कुछ भी हो, चौका घरनी से ही जुड़ा रहता है। यही कारण है कि बरसों पूर्व बौद्ध भिक्षुणियों द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध थेरी गाथाओं में मुक्ति का एक भाव उस अनुभव से भी जुड़ा हुआ है, जहां वह चूल्हे–चक्की से छूटती हैं। बुद्ध की शरण में आने के बाद भिक्षुणी कहती है – 'अरी भली मैं छूटी/चूल्हे–चक्की से/और तीन टेढ़ी चीजों से/ओखली से/मूसल से/और अपने स्वामी से।'

आंकड़ो के हिसाब से देखें तो 5–9 आयु वर्ग की लड़कियां अपने बराबर के लड़कों से तीस प्रतिशत ज्यादा काम करती हैं। उत्तरखंड में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार पुरूष एक दिन में औसतन नौ घंटे काम करते हैं तो महिलाएं सोलह घंटे। विडंबना यह है कि समाज महिला श्रम को उस रूप में कहीं भी पहचान नहीं देना चाहता। हाथी के पांव में सबका मान कर दोहरा श्रम करने वाली स्त्रियों को कोई पहचान नहीं दी जाती। समृद्धि परिवारों की स्त्रियों को भी संसाधनों पर मालिकाना हक नहीं मिलता। काम के घंटे तिगुने होने पर भी भुगतान में उन्हें काफी कम मिलता है। दुनिया की कुल संपत्ति का दो प्रतिशत हिस्सा ही स्त्रियों के पास है। स्त्री श्रम की पहचान के इस बड़े प्रश्न का निराकरण स्त्रियां खुद ही सचेत होकर कर सकती हैं। उन्हें बाहर से कोई पहचान नहीं देने वाला ।

नगर समाज की संकल्पना तथा कार्य क्षेत्र

डिम्पल कुमारी

किसी भी समाज, प्रदेश या राष्ट्र के आधारभूत विकास को नवीन उच्च स्तर पर ले जाने के लिए पारदर्शी, सरल और सुलभ प्रशासन की आवश्यकता होती है। भारत जैसे विशाल लोकतंत्र में यदि प्रशासन की पहुंच हर नागरिक तक समान रूप से हो जाए और अंतिम छोर पर मौजूद व्यक्ति भी सामाजिक सुविधाओं का लाभ सुगमता के साथ उठा सके, तो सामाजिक बदलाव की एक सकारात्मक तस्वीर सामने आ सकती है। तब यह दावा किया जा सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके समस्त अधिकार सहज सुलभ हो रहे हैं। आज के नवउदारवाद के दौर में राज्य पश्चगमन की प्रक्रिया के तहत सरकार द्वारा अपने परंपरागत दायित्वों को बाज़ार व नागरिक समाज को सौंप दिया गया है। नव उदारवाद का यह दर्शन ''न्यूनतम शासन एवं अधिकतम अभिशासन'' पर बल देता है तथा सरकारों को सेवा प्रदान करने के स्थान पर सुविधा प्रदायक एवं सक्षम बनाने वाली भूमिका अपनाने पर बल देता है। इसी का एक आयाम नागरिक समाज की बढ़ती सक्रियता है। वर्तमान सरकारें विश्वभर में सामाजिक विकास के क्षेत्र में नागरिक समाज को अधिक से अधिक भूमिका प्रदान कर रही हैं ताकि विकास प्रक्रिया में व्यापक जन सहभागिता जुटाई जा सके और विकास के लक्ष्य प्राप्त किए जा सके। समर्थ नागरिक समाज नागरिकों को घर बैठे ही तमाम सूचनाएं और उनके अधिकार दिलवा सकता है। प्रस्तुत आलेख में सिविल सोसाइटी की संकल्पना, वर्तमान स्थिति, भूमिका, सीमाएं और मानवाधिकार संरक्षण एवं संवर्द्धन में उसके योगदान का वर्णन व विश्लेषण किया गया है।

सिविल सोसाइटी की संकल्पना

सिविल सोसाइटी की धारणा वस्तुतः काफी पुरानी है, लेकिन पिछले दशक में विश्व स्तर पर हो रहे राजनीतिक घटनाक्रम इसके पुनः लोकप्रिय होने के कारण बने हैं। इसका एक अन्य कारक भी बहुत महत्वपूर्ण है – हाल के वर्षों में राज्येतर तत्व, खासकर स्वैच्छिक संगठन और आन्दोलन, सार्वजनिक नीतियों के निर्माण और कार्यान्वयन में प्रभावशाली भूमिका निभाने लगे हैं। यथार्थ में, आमतौर पर सिविल सोसाइटी यानि नागरिक समाज से अनेक ऐसे सामाजिक और राजनीतिक शक्तियों का बोध होता है जो राज्य के सीधे नियंत्रण से बाहर हैं। ऐसी शक्तियां अधिकतर, सांस्कृतिक, पर्यावणीय अथवा ऐसे ही अन्य क्षेत्रों से संबद्ध होती हैं। हमारे यहाँ नागरिक समाज के तीन प्रमुख स्रोत हैं – अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति। वस्तुतः नागरिक व सभ्य समाज की अवधारणा उत्तर आधुनिक युग की लोकप्रिय अवधारणा बन गई है। सर्वप्रथम राजनीतिक दार्शनिक डीएफ हैगल ने नागरिक समाज को राज्य से

भिन्न अवधारणा माना था। बाद में कार्ल मार्क्स, फ्रेड्रिक एंजेल्स जैसे साम्यवादी विचारकों ने नागरिक समाज की अवधारणा को आगे बढ़ाया। बीसवीं सदी में एंटोनियो प्रांशौ ने इस अवधारणा का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया। आज के आधुनिक समाज के तीन मुख्य क्षेत्र माने गए हैं – सरकार, बाजार और नागरिक समाज। इनमें से तृतीय क्षेत्र सिविल सोसाइटी अर्थात नागरिक या सभ्य समाज पहले के दो क्षेत्रों पर अपनी लोकतांत्रिक जागरूकता से नियंत्रण रखता है।

शाब्दिक दृष्टि से देखा जाए तो नागरिक समाज के लिए अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द है ''सिविल सोसायटी''। सिविल का अर्थ है, नागरिक अर्थात् असैनिक। इसके अन्य अर्थ हैं – नागरिकों से संबंधित, दीवानी मामले, सहयोग करने वाले व्यक्ति, उत्तरदायी और सुसंस्कृत व्यक्ति आदि। सोसाइटी का अर्थ है, समाज या समिति। वस्तुतः नागरिक समाज सभ्य, जागरूक और उत्तरदायी व्यक्तियों का समूह है। इस अर्थ में यह राज्य से भिन्न हो जाता है क्योंकि राज्य के अंतर्गत समस्त संगठित और असंगठित क्षेत्र आता है जबकि सभ्य समाज के अंतर्गत मात्र संगठित। नागरिक समाज में मात्र उत्तदायी और उचित विधि से काम करने वाले व्यक्ति ही शामिल होते हैं। राज्य के पीछे मुख्य भूमिका नागरिक समाज की ही होती है। एमके दास के अनुसार, नागरिक समाज वह संगठित समाज है जिस पर राज्य शासन करता है। जेफ्री एलेग्जेंडर के अनुसार नागरिक सामाजिक समावेश छाते जैसी अवधारणा है जो राज्य के बाहर स्थित असंख्य संस्थाओं को अपनी छाया में रखती है। सरल शब्दों में नागरिक समाज का अर्थ है कि राज्य संस्थाओं का एक ऐसा समूह है जो सरकार व समाज के बीच मध्यस्थता करता है, प्रधान नागरिकों की वहां सहायता करता है जहां सरकार नहीं कर पाती है। समकालीन समय में नागरिक समाज कई क्षेत्रों में कार्य कर रहा है तथा सरकार के दायित्वों को पूर्ण करने में पूर्ण भूमिका निभा रहा है। नागरिक समाज में सामान्यतया कुटुम्ब, जातीय समूह, दबाव समूह तथा गैर सरकारी संगठन शामिल होते हैं। पाशचात्य जगत में जॉन लॉक, स्काटलैंड के सिद्धान्तकारों व हीगेल के मत नागरिक समाज पर काफी प्रभावशाली रहे हैं। किन्तु कार्ल मार्क्स की नागरिक समाज की समीक्षा और मार्क्सवादी विचारक ग्रास्की द्वारा उसके परिष्कार भी उल्लेखनीय हैं। इन सबका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है।

सिविल सोसाइटी पर जॉन लॉक मत

अपने सामाजिक संविदा के सिद्धान्त को मानते हुए जॉन लॉक ने, व्यवस्थित राजनीतिक समाज को नागरिक समाज माना। उसके अनुसार, व्यक्तियों के पास प्राकृतिक अधिकारों के होने की स्थिति में कानून बनाने वाला, उन्हें लागू करने वाला और अपराधियों को दंड देने वाला कोई प्राधिकारी नहीं होता। लेकिन, जब व्यक्ति सामूहिक तौर पर अपने प्राकृतिक अधिकारों को राज्य अथवा समुदाय को समर्पित कर देते हैं ताकि उसके द्वारा उनके जीवन,

स्वतंत्रता और संपत्ति के बुनियादी अधिकार संरक्षित रह सकें, तो कहा जा सकता है कि उन्होंने एक नागरिक समाज का निर्माण कर लिया है। इस नागरिक समाज के कार्य हैं – कानून बनाना, उन्हें लागू करना और उनका उल्लंघन करने वालों को दंडित करना। इस प्रकार, लॉक के अनुसार, नागरिक समाज प्राकृतिक अवस्था के विरूद्ध होता है, क्योंकि यह स्थायी कानूनों, न्यायधीशों और प्रभावी बाध्यकारी सत्ता वाला व्यवस्थित समुदाय होता है। मानव प्राणी सभ्य, शिष्ट और अनुशासित रहें, इसके लिए नागरिक समाज का होना आवश्यक है। लॉक की स्पष्ट मान्यता है कि नागरिक समाज और राज्य एक दूसरे से भिन्न हैं। उसके अनुसार, राज्य एक न्यासी सत्ता है जो नागरिक समाज के न्यास पर निर्भर करता है। यदि राज्य निरंकुश अथवा गैरजवाबदेह ढ़ंग से काम करने लगे और व्यक्तियों के अधिकार में कटौती करने लगे तो नागरिक समाज को चाहिए कि उस पर रोक लगाए। इस प्रकार, लॉक दो प्रकार के अनुबंधों का उल्लेख करता हैः एक, नागरिक समाज के सदस्यों के बीच तथा दूसरा, सरकार के निर्माण के लिए। लॉक ने राज्य की सत्ता को सीमित रखने के दो उपाए सुझाए : (1) भौतिक संसाधन और (2) संवैधानिक आधार पर नैतिक नियम, जो राज्य और अन्य नागरिक निकायों के कृत्य का निर्धारण करते हैं। अन्य सामाजिक निकाय इसलिए आवश्यक हैं, क्योंकि सामजिक जीवन के लिए अनेक प्रकार के क्रियाकलाप अपेक्षित हैं और राज्य मानव प्राणी के सारे लक्ष्यों की पूर्ति का उपयुक्त संगठन नहीं है। इस तरह, राज्य के साथ–साथ अन्य सामाजिक निकायों और संघों का होना आवश्यक है और ये अन्य समूह की नागरिक समाज के घटक हैं। नागरिक समाज के ये समूह राज्य पर नियंत्रण रखते हैं।

स्कॉटलैंड के सिद्धान्तकारों के मत

स्कॉटिश सिद्धान्तकारों के रूप में जाने गए – हचिसन, एडम फर्ग्यूसन, एडम स्मिथ जैसे विचारकों ने अठारहवीं सदी में यूरोप और इंग्लैण्ड में विकसित होते नव पूंजीवाद की व्याख्या करने और उसे उचित ठहारने के लिए सिविल सोसाइटी के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए। उनका कहना था कि मुनाफा, धन और द्रव्य कमाने का लक्ष्य इतना तर्कसंगत और विवेकपूर्ण है कि उस पर राज्य द्वारा वैधिक न्याय व्यवस्था के तहत किसी प्रकार का हस्तक्षेप अथवा रोक अनुचित है। उनकी दृष्टि में ऐसा नागरिक समाज जो वाणिज्यिक गतिविधियों पर ध्यान केंद्रित करता है, एक उच्चतर समाज है और सभ्यता का उच्चतर स्वरूप है। यह सैनिक विजय को अपना लक्ष्य नहीं बनाता, बल्कि समाज कला और विज्ञान को भी प्रोत्साहित करता है। इसके अतिरिक्त, इसने भौतिक सुख–सुविधा के सामानों के उत्पादन की वृद्धि में सहायता की और आत्म नियंत्रण एवं शिष्ट आचरण पर आधारित व्यवस्थित एक समाज का निर्माण आसान हो गया। स्कॉटिश सिद्धान्तकारों ने वाणिज्यिक ढ़ाचे को नागरिकों के अधिकतम हित–साधन के रूप में देखा। बाज़ार प्रणाली ने सिर्फ पारस्परिक हित के लिए निजी सामाजिक संबंधों को अधिक परिपक्व आधार प्रदान किया है। इस तरह नागरिक समाज ऐसी राज्य प्रणाली का सहगामी है जो विधि के नियम, सीमित सरकार, अहस्तक्षेप की नीति,

वाणिज्यिक क्रियाकलाप, बाजार और वाणिज्यिक अनुबंधों एवं स्वतंत्रता का समर्थक है। उन्होंने नागरिक समाज को राज्य का सहगामी ही नहीं एक सभ्य समाज के रूप में भी देखा।

सिविल सोसाइटी का हीगेल मत

जर्मन विचारक हीगेल ने समाज के तीन पहलुओं – परिवार, नागरिक समाज और राज्य में विभेद किया। उसने परिवार को निजी और नागरिक समाज को सार्वजनिक क्षेत्र में रखा। उसने नागरिक समाज को प्रतिवाद और राज्य को संवाद की संज्ञा दी और नागरिक समाज को मनुष्य और समाज के सर्वोच्च नैतिक उत्थान की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना और इसे राज्य के माध्यम से ही संभव बताया। हीगेल के अनुसार, अपने छोटे आकार और दायरे के कारण परिवार व्यक्ति की सारी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता। यह आधुनिक राज्य द्वारा बड़े पैमाने पर अपेक्षित अवैयक्तिक कृत्यों और आर्थिक एवं सामाजिक जीवन की गतिविधियों के लिए सर्वथा अपर्याप्त है। इसीलिए हीगेल नागरिक समाज को, जो आधुनिक औद्योगिक पूंजीवादी समाज की सामाजिक, आर्थिक और नैतिक व्यवस्थाओं के लिए आवश्यक है, 'प्रतिवाद' कहता है। नागरिक समाज आधुनिक पूंजीवाद की भौतिकवादी सभ्यता के लिए विशिष्टीकरण और परिष्करण का मार्ग प्रशस्त करता है। समुदाय का सामाजिक जीवन मुक्त बाज़ार वाली प्रतियोगी अर्थव्यवस्था से बाधित होता है। आधुनिक पूंजीवादी प्रणाली में नागरिक प्रणाली में नागरिक समाज स्वार्थ–परायण, घोर प्रतियोगी और धनलोलुप हो जाता है। ऐसे हालात में सारे संघर्षों और विभाजनों से ऊपर उठाकर संपूर्ण समुदाय के श्रेष्ठ हितों को साधने के लिए राज्य की आवश्यकता होती है। हीगेल की दृष्टि में नागरिक समाज उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए भौतिक उत्पादकता के निर्माण और संचालन के लिए आर्थिक प्रेरणा तो प्रदान करता है, किन्तु, इसके फलस्वरूप एक छोटे–से समुदाय का भातृत्व और सामाजिक सौहार्द नष्ट हो जाता हैं। इसी स्थिति में वाद (परिवार) और प्रतिवाद (नागरिक समाज) का मिलन होता है और उसकी परिणति संवाद (राज्य) में होती है। परिवार और नागरिक जीवन में जो कुछ सर्वोत्तम है उसे राज्य कायम रखता है और एकता तथा सामंजस्य की स्थापना करता है।

सिविल सोसाइटी का मार्क्सवादी मत

हीगेल की राज्य संबंधी अवधारणा के विपरीत मार्क्स मानता था कि राज्य संवाद के परिणामस्वरूप निर्मित सर्व–समावेशी राजनीतिक समुदाय न होकर नागरिक समाज की परस्पर संघर्षरत शक्तियों का कृत्य है और उनके अधीन ही कार्य करता है। उसके अनुसार, नागरिक समाज पूंजीवादी प्रणाली की बाजार–आधारित प्रणाली में उत्पादन और विनिमय की आर्थिक व्यवस्था, जो श्रम–विभाजन और वर्गों में विभाजित समाज पर टिकी होती है, के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मनुष्य का इतिहास सिर्फ नागरिक समाज का इतिहास भर है

और नागरिक समाज आर्थिक संबंधों का ढ़ांचा मात्र है जिसमें राज्य की स्थिति अपेक्षाकृत महत्वहीन रहती है। मार्क्स ने इस विचार से अवश्य सहमति जताई कि नागरिक समाज का उद्भव पश्च–सामंती काल में निजी आर्थिक उत्पादन से राज्य के अलगाव से हुआ है। उसकी दृष्टि में मुक्त बाज़ारवादी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में नागरिक समाज बुनियादी तौर पर एक गैर–सामाजिक निष्ठुर व्यवस्था है क्योंकि इसमें आर्थिक वर्गों के बीच तीव्र प्रतियोगिता और संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। इस प्रकार, पूंजीवादी व्यवस्था में नागरिक समाज मनुष्य द्वारा मनुष्य का धनी व्यापारी वर्ग या बुर्जुआ द्वारा निर्धन श्रमिक वर्ग का शोषण मात्र है। इस शोषण का अंत तभी होता है जब वर्ग–संघर्ष शुरू होता है और सर्वहारा वर्ग क्रांति द्वारा वर्गविहीन और राज्यविहीन स्वतंत्र सहकारी उत्पादकों के समुदाय की स्थापना के लिए राज्य को ख़त्म कर देता है। इस प्रकार मार्क्स की दृष्टि में पूंजीवादी समाज में नागरिक समाज एक ऐसी वाणिज्यिक और औद्यौगिक जीवन पद्धति का अंग होता है जो मानवप्राणी को अर्जनशील तथा स्वार्थी बनाता है और उनके बीच सिर्फ आर्थिक संबंध बनाने की प्रवृति पैदा करता है।

सिविल सोसाइटी के संबंध में ग्राम्सी का मत

ग्राम्सी ने हीगेल और मार्क्स के विश्लेषणों को संयुक्त कर मार्क्स के मत को किंचित रूपांतरित कर दिया। उसके अनुसार, नागरिक समाज न तो प्राकृतिक स्थिति और न औद्योगिक समाज का परिणाम है। यह एक ऐसे 'आधिपत्य' का कार्य है जो राजनीतिक और सांस्कृतिक दोनों हो सकता है। उसने समाज की अधिरचना को दो भागों में बांटा है – नागरिक समाज और राजनीतिक समाज। समाज के प्रभावशाली वर्ग इसी अधिरचना के दोनों अवयवों के माध्यम से दमनकारी और विचारधारात्मक दोनों तरीकों से अपने आधिपत्य का इस्तेमाल करते हैं। ग्राम्सी के अनुसार नागरिक समाज में भौतिक के साथ–साथ विचारधारात्मक और सांस्कृतिक संबंध भी बनते हैं, अर्थात इसमें जीवन के वाणिज्यिक और औद्योगिक संबंधों के साथ–साथ आध्यातिमक और बौद्धिक पहलू भी शामिल होते हैं। इसमें चर्च, राजनीतिक दल, श्रमिक संगठन, और यहां तक कि स्वैच्छिक और गैर–सरकारी संगठन भी शामिल हैं। ये सभी प्रभावशाली वर्ग की विचारधारा को समर्थन एवं प्रोत्साहन देते रहते हैं। ये प्रभावशाली वर्ग हमेशा अपनी सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक सर्वोच्चता को सुनिश्चित करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं और उनके अधीनस्थ वर्ग भी उन्हें अपनी स्वीकृति प्रदान कर देते हैं। ग्राम्सी का विश्वास था कि राज्य को अपनी दमनकारी शक्ति का उपयोग करने की आवश्यकता तभी पड़ती है, जब विचारधारा की चतुर योजना काम नहीं करती। पूंजीवादी प्रणाली में नागरिक समाज की सूक्ष्म किंतु प्रभावशाली कार्यशैली का इस्तेमाल शोषित श्रमिक वर्ग की क्रांति या विद्रोह के विरूद्ध सुरक्षा की दूसरी पंक्ति के रूप में किया जाता है। लेकिन उसने यह भी स्वीकार किया कि नागरिक समाज श्रमिक वर्ग को आधिपत्य कायम करने के अवसर प्रदान करता है और अंतिम क्रांतिकारी संघर्ष की पृष्ठभूमि तैयार करता है।

सिविल सोसाइटी का उदारवादी व्यक्तिपरक मत

पाशचात्य चिंतन की उदारवादी परंपरा के अनुसार, नागरिक संघों, समतामूलक संस्थाओं और राजनीतिक संगठनों में लोगों की सहभागिता के बगैर सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं के लोकतंत्रिक स्वरूप को अक्षुण्ण नहीं रखा जा सकता, क्योंकि एक बहुलवादी और स्वशासी नागरिक समाज, जो राज्य से स्वतंत्र हो, लोकतंत्र की बुनियादी शर्त है। उदारवादी योजना में नागरिक समाज के संघों के अंतर्गत पड़ोसी के कल्याण संघ से लेकर सांस्कृतिक संघ और श्रमिक संगठन तक कुछ भी हो सकते हैं, और लोग उनमें स्वेच्छा एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ उत्तरदायित्व–भावना से भाग ले सकते है। राज्य अपनी भूमिका में दमनात्मक सत्ता का उपयोग करता है, जबकि नागरिक समाज व्यक्ति को अपनी नियती संवारनें की स्वतंत्रता प्रदान करता है। अधिकतम स्वतंत्रता की प्रतिबद्धता के कारण उदारवादी विचारकों ने राज्य पर नागरिक समाज को तरजीह दी और सार्वजनिक प्राधिकार की सत्ता को न्यूनतम करने का प्रयास किया। उदारवादी चिंतक हेना आरेंत के अनुसार, स्वतंत्र रूप से निर्मित और संचालित नागरिक समाज वाले संघ सर्वसत्तावाद की संभावनाओं के प्रतिभार के रूप में कार्य करते हैं, क्योंकि वे राज्य और व्यक्ति के बीच का स्थान लेते हैं। एक अन्य प्रमुख विचारक हैबर मास का कहना है कि नागरिक समाज की साझेदारी बहुत जरूरी है। नैंसी रोजेनब्लम ने कहा है कि उदारवाद विरोधी भावनाओं को विस्फोटक बनने से रोककर उनसे शांति से निपटने के लिए, लोकतांत्रिक उदारवाद के मूल्यों के समर्थक नागरिक समाज संगठन को भी प्रोत्साहित करने और सहभागी बनाने का अवसर दिया जाना चाहिए।

सिविल सोसाइटी की भूमिका

सिविल सोसाइटी का कार्यक्षेत्र व्यक्तिगत मानवधिकारों की रक्षा से लेकर राष्ट्र–राज्य के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक और प्रशासनिक क्षेत्र तक विस्तृत है। इसके व्यावहारिक पक्षों का मानव के तमाम क्रियाकलापों से सीधा संबंध रहा है। सिविल सोसाइटी की शक्ति का खुलासा पिछले दशकों में मुख्य रूप से कोलकोवास्की, वाकलाव हैवेल, वाज्दा और अन्य नागरिक समाज के नेताओं और बुद्धिजीवियों के कारण ही हुआ है। प्रच्छन्न नागरिक समाज के समूहों ने रूस में ग्लासनास्त (पारदर्शिता) और पेरेस्त्रोइका के काल में शुरू हुए परिवर्तनों की प्रक्रिया में अग्रगामी राजनीतिक संगठनों और आंदोलनों की भूमिका निभाई। इस ऐतिहासिक परिवर्तन के पश्चात नागरिक समाज के संगठन स्वतंत्रता, बहुलवाद और सहभागिता की दशाओं से जुड़े रहे हैं। नागरिक समाज के आन्दोलन ने प्रसुप्त राष्ट्रीय, संजातीय और धार्मिक असीमताओं को पुनर्जीवित करने के लिए राजनीतिक दलों, संगठनों, सूचना–तंत्र के सदनों, प्रकाशन संस्थानों और व्यापारी संघों जैसे अनेक संघों का पुननिर्माण किया है। सिविल सोसाइटी एक सामाजिक संगठन का डोमेन है जिसमें स्वैच्छिक साहचर्य संबंध प्रमुख हैं। क्रियात्मक समाज को आधार देने वाले स्वैच्छिक नागरिक और सामाजिक

संगठनों और संस्थाओं की समग्रता से बने नागरिक समाज की भूमिका वर्तमान में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महत्वपूर्ण है। नागरिक समाज की भूमिका के कुछ आयाम अग्रलिखित हैं – समाज में लोकतंत्रिक अभिशासन के लिए नीति का समर्थन, संसदीय विकास, निर्वाचन प्रणालियों और प्रक्रियाओं, न्याय और मानवाधिकार, ई–गवर्नेस और जानकारी तक पहुँच, विकेन्द्रीकरण, स्थानीय प्रशासन और शहरी/ग्रामीण विकास, लोक प्रशासन में सुधार और भ्रष्टाचार विरोधी, संसदीय व्यवस्था के अंतर्गत प्राइवेट मेम्बर बिल पर ध्यान, शिक्षा, स्वास्थ्य, खेल, मनोरंजन, पर्यावरण, पेय जल, महिला विकास, उदाहरण के लिए नदी संरक्षण में नर्मदा बचाओ आन्दोलन, चिपको आन्दोलन, आर.टी.आई. का हमारे मूल अधिकार में शामिल होना, आर.टी.ई. का 6 वर्ष से 14 तक के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा का अधिकार की प्राप्ति, सार्वजनिक नीतियों के निर्माण व कार्यान्वयन में प्रभावी भूमिका आदि। उपर्युक्त समस्त कार्यों से मानवधिकारों का भी संवर्द्धन होता है।

डायमंड के अनुसार मानवाधिकार संरक्षण के लिए उदारवादी लोकतंत्र के सुदृढ़ीकरण हेतु नागरिक समाज द्वारा निम्न कार्य सम्पन्न किए जाते हैं – (1) राज्य–सत्ता को निष्प्रभावी करने वाली शक्ति के रूप में कार्य करना। (2) जनता के बीच राजनीतिक सहभागिता का भाव जगाना और लोकतांत्रिक कुशलता को प्रश्रय देना ताकि एक लोकतांत्रिक राजनीतिक संस्कृति विकसित हो सके। (3) यह विभिन्न हितों को, जिनमें अनेक मुख्यधारा के राजनैतिक दलों के माध्यम से प्रतिनिधित्व नहीं प्राप्त कर सकतें हों, प्रतिनिधत्व प्रदान करने में मदद करता है। (4) यह विभिन्न हितों और समूहों के बीच अन्योन्य संबंध स्थापित करने में मदद करता है। (5) यह भावी राजनेताओं के लिए प्रशिक्षण का आधार तैयार करता है। (6) यह नीतिगत युक्तियों के बारे में सूचना का विकीर्णन करता है और लोकनीतियों के क्रियान्वयन में अनुश्रवण समूह (निगरानी रखने वाला समूह) का काम करता है। (7) यह परस्पर विरोधी संकल्पों के बीच मध्यस्थता का कार्य करता है आदि। संयुक्त राष्ट्र संघ के पूर्व महानिदेशक बान–की मून के अनुसार – नागरिक समाज सामाजिक प्रगति एवं आर्थिक वृद्धि में उत्प्रेरक भूमिका, लोकतंत्र की ऑक्सीजन, जीवंत और स्थिर लोकतांत्रिक व्यस्वथा व सरकार की जवाबदेही बनाए रखने, कमजोर वर्ग और विविधतापूर्ण जनसंख्या के हितों का प्रतिनिधित्व करने आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। नागरिक समाज के अन्य कार्य – समानता आधारित सार्वजनिक कल्याण, पिछड़े व्यक्तियों व समुदायों का विकास, जन सहभागिता, जनता को सरकारी योजनाओं तथा सरकार को जनता की समस्याओं से अवगत करवाना, प्रशासनिक जबावदेही – भ्रष्टाचार पर रोक, प्रशासन को हितग्राही – लक्ष्य समूह तय करवाना, स्थानीय विकास के लिए स्थानीय संसाधनों का दोहन, सामुदायिक आत्मनिर्भरता, ग्रामीण महिलाओं द्वारा छोटे ऋणों की मदद से किए प्रयासों को बढ़ावा देना, स्थानीय शासन को स्वायत्त बनाना, जनता में राजनीतिक प्रशासनिक चेतना जगाना, जनता की मांगों को संगठित करना, परस्पर सहायता द्वारा आत्म सहायता, गरीबों के दुख दूर करने में सहायता करना आदि हैं। स्पष्ट है कि नागरिक समाज सरकार की विरोधी नहीं, उसकी पूरक व्यवस्था

है। इसमें से कुछ स्वतः स्फूर्त होते हैं अर्थात् अनौपचारिक प्रकृति के होते हैं तो अधिकतर औपचारिक प्रकृति के होते हैं। सिविल सोसाइटी द्वारा अंधराष्ट्रवाद, तानाशाही, सांप्रदायिकता, क्षेत्रवाद, जातिवाद, वंशवाद, अलगाव जैसी धारणाओं को समाप्त करके मानवाधिकारों का संरक्षण सुनिश्चित किया जाता है।

मानवाधिकार संरक्षण एवं संवर्द्धन

सिविल सोसाइटी की, वर्तमान पीढ़ी आने वाले पेशेवरों और सरकारी अधिकारियों के बीच, मानव अधिकारों की जागरूकता, संवैधानिक शिक्षा, संवैधानिक जागरूकता और मानवाधिकार शिक्षा को समझने, जीने और बढ़ावा देने में एक प्रमुख भूमिका है। लोगों को पता हो कि उनके पास स्वास्थ्य देखभाल, विरोध करने व स्कूल जाने का अधिकार है। संविधान, अधिकारों के विधेयक, मानवाधिकार कानून के बारे में जागरूकता का स्तर, शिक्षा के स्तर, सामाजिक–आर्थिक स्थिति और सूचनाओं तक पहुंच के साथ दृढ़ता से जुड़े हैं। इसे सिविल सोसइटी द्वारा कार्यशालाओं की श्रृंखला, सरकारी और नागरिक समाज संगठनों के बीच साझेदारी, शैक्षिक कार्यक्रमों के लिए एक ढ़ांचा, प्रशिक्षण सामग्री और प्रभावी निगरानी द्वारा ही संभव किया जा सकता है। मानव अधिकारों के संरक्षण में नागरिक समाज की भूमिका और सीमाएं स्पष्ट करने के लिए यह जानना सबसे महत्पपूर्ण है कि नागरिक समाज को राज्य, संस्थाओं और राजनीतिक दलों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। राज्य का यह दायित्व है कि वह वैद्य व संप्रभु मानदंडों, कानूनों और संस्थानों की स्थापना करे, जो कि नागरिकों के अधिकारों और समूहों के अधिकारों की रक्षा करने में समक्ष हों। नागरिक समाज की भूमिका तब और अधिक बढ़ जाती है, जब राज्य अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण करने में असफल रहे। सिविल सोसाइटी की महत्वपूर्ण भूमिका अग्रलिखित हैं – मानवाधिकार, कानून और उनकी संवैधानिकता के प्रति सम्मान की निगरानी, व्यक्ति की शारीरिक सुरक्षा, वैध संपति की सुरक्षा, सार्वजनिक संपत्तियों की सुरक्षा, ऐसे नए सामाजिक मूल्यों का प्रस्ताव जो एक नए कर्तव्य के रूप में, मानव गरिमा, व्यक्ति की शारीरिक सुरक्षा, स्वतंत्रता और जिम्मेदारियों का सम्मान करते हों, लोगों की गत्यात्मकता द्वारा परिवर्तन; विशेषज्ञों और शोधकर्ताओं के समर्थन से विचार पैदा करना; ज़मीन पर नई प्रथाओं के लिए एक उत्प्रेरक की तरह काम करना जो अपने काम को एक सामाजिक स्तंभ, शक्ति और वैधता प्रदान करें, लोकतंत्र निर्माणः एक नैतिक आवश्यकता, एक अभ्यास और न्याय का एक साधन, समानता और कानून का शासन; शक्तियों पर समुदाय का नियंत्रण, लोगों के लिए निर्णय लेने, कार्यान्वयन और परियोजनाओं की निगरानी की प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अवसर प्रदान करना, लोगों को अपने नेताओं को स्वतंत्र रूप से चुनना, सत्ता के प्रबंधन में शामिल होना, उनके प्रतिनिधियों पर नियंत्रण करना और असफलता की स्थिति में उनके जनादेश को वापस लेना आदि।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से कोई भी सिविल सोसाइटी अकेले कार्य नहीं कर सकती। अतः

इसे मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए पूर्ण स्वायत्त राष्ट्रीय संस्थानों की स्थापना का समर्थन करना चाहिए तथा राज्य और इन मध्यस्थता निकायों के साथ मज़बूत सहयोग प्रदान करते हुए कार्य करना चाहिए। यह सब मिलकर मानवाधिकार के क्षेत्र में सामना की जा रही निम्न बाधाओं का मुकाबला कर सकते हैं – संवैधानिक मानव अधिकार की गारंटी देना, दण्ड से मुक्ति के खिलाफ एक एकीकृत राष्ट्रीय रणनीति को अपनाना और लागू करना; न्याय, सुरक्षा और कानून प्रवर्तन, शिक्षा और सेवा प्रशिक्षण के क्षेत्र में सार्वजनिक नीतियों को तैयार करना व लागू करना और समाज के सभी घटकों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना; कार्यकारी शाखा से उत्पन्न कानूनों और स्वायत्त नियमों की संवैधानिकता के नियंत्रण को मजूबत करना; सुरक्षित प्रशासन सुनिश्चित करना, जिसमें नवीनीकरण, स्पष्टीकरण और विनियमों का प्रकाशन शामिल है। आर्थिक उदारीकरण और बुनियादी सार्वजनिक सेवाओं के निजीकरण से उत्पन्न नवीन चुनौतियों का सामना करने हेतु सिविल सोसाइटी, मानव अधिकारों के रक्षकों की साझेदारी के माध्यम से, प्रशिक्षण में योगदान करने और संघों की स्वायत्तता और स्वतंत्रता के संबंध में सुरक्षा देने, अधिकारियों को आम जन की जागरूकता बढ़ाने में सक्षम बनाने, संसद के सदस्यों की आजादी की पुष्टि करने, उन्हें सहयोगी दल बनाने, संसद सदस्यों को अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने और नागरिकों के प्रति प्रतिबद्धता को पूरा करने के तरीके को नियंत्रित करने, शक्तियों को अलग करने पर स्पष्ट प्रावधानों को बढ़ावा देने तथा संवैधानिक, क़ानूनी और संस्थागत तंत्र (कार्यकारी और विधायिका) के बीच बेहतर संतुलन सुनिश्चित करने के कार्य करती हैं।

वर्तमान बदलता परिदृश्य

वर्तमान में हमारी नीतियों में सिविल सोसाइटी और अधिकार आधारित दृष्टिकोण सीमित होता जा रहा है। यह दृष्टिकोण लोकतंत्र के भविष्य के लिए ठीक नहीं है। वर्ष 2004 से 2014 तक सिविल सोसाइटी संगठन समाज की भलाई हेतु सरकार से नागरिकों के अधिकारों को सुनिश्चित कराने के लिए एकजुट हुए थे। किन्तु जब सूचना का अधिकार, खाद्य और कार्य करने का अधिकार पारित किए गए तो इन कार्यकर्ताओं ने आयोग के कार्य पर निगरानी रखनी शुरू करके नागरिकों की रिपोर्टें जारी कर दी। आज सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की घोषणा सिविल सोसाइटी संगठनों से परामर्श किए बिना ही की जा रही है। सरकार ने इन संगठनों के बैंक खातों को ब्लॉक करके, उन्हें प्राप्त होने वाले धन पर रोक लगाकर, लोगों के लिए कार्य करने की उनकी क्षमता पर प्रश्नचिह्न लगाकर उनके विरूद्ध सख़्त रवैया अपनाया है। कई घटनाओं में ग्रीनपीस जैसे गैर–सरकारी संगठनों को राष्ट्रविरोधी भी बताया गया है। सरकार सिविल सोसाइटी में मौजूदा अंतरालों को कम करने के भी अनेक प्रयास कर रही है। सिविल सोसाइटी के राजनीतिक परिदृश्य में इस प्रकार के बदलावों से हमें समझना होगा कि सिविल सोसाइटी को राष्ट्र से अलग नहीं रखा जा सकता है। एक लोकतांत्रिक राष्ट्र में लोकतांत्रिक सिविल सोसाइटी और लोकतांत्रिक राष्ट्र को एक दूसरे की

आवश्यकता होती है। लोकतांत्रिक राष्ट्र एक ऐसा राष्ट्र होता है जो 'मतदान की राजनीति' के स्थान पर 'आवाज़ की राजनीति' का सम्मान करता है। यदि सरकार नागरिकों की आवाज़ का सम्मान उन्हें अभिव्यक्ति तथा संघ बनाने की स्वतंत्रता देकर करेगी तो इससे सिविल सोसाइटी की आकांक्षाएँ मुखर होंगी और वह राष्ट्र के साथ जुड़कर इसका सामाजिक रिपोर्ट कार्ड जारी करेंगे। लोकतंत्र के सिद्धांतों को सिविल सोसाइटी के संयुक्त कार्यों के माध्यम से ही वास्तविकता में बदला जा सकता है। सिविल सोसाइटी को क्षीण करने के प्रयासों में लोकतंत्र की अवधारणा भी छिन्न–भिन्न हो जाएगी, नागरिकों को केवल एक मतदाता के रूप में देखा जाएगा तथा वे राष्ट्र में अपनी वास्तविक स्थिति से वंचित रह जाएंगे। इस स्थिति से यथाशीघ्र उबरने की महत्ती आवश्यकता है।

निष्कर्ष

अपने तमाम सकारात्मक आयामों के बावजूद सिविल सोसाइटी आज भी अपना वजूद तलाश रही हैं। जहां एक ओर नागरिक समाज की भूमिकाओं और क्षेत्रों में वृद्धि हो रही है वहीं दूसरी ओर सरकार, संस्थाओं, नीति नियंताओं और सिविल सोसाइटी के मध्य तालमेल कठिन से कठिनतर होता जा रहा है। अधिकारियों ने नागरिक सामाजिक संगठनों पर लगे प्रतिबंधों को और कड़ा कर दिया है। विदेशी अंशदान नियमन अधिनियम (एफसीआरए) का अधिकारिक उपयोग, संगठनों को परेशान करने के लिए, विदेशी दाताओं से प्राप्त अनुदान पर नजर रखने के लिए होता है जो उनकी गतिविधियों में बाधाओं को डालने के लिए, सरकारी नीतियों की आलोचना या सवालों और विदेशों से फंड को हटाने के लिए होता है। भारतीय नागरिक समाज पर इसका गंभीर प्रभाव पड़ा है। जब भारतीय गृह मंत्रालय, एफसीआरए के अनुसार एक जांच का आयोजन करती है, तो यह अक्सर, जांच होने पर सिविल सोसाइटी जैसे गैर सरकारी संगठनों के खातों को बंद कर देती है, दान देने के सभी स्त्रोतों को बंद कर देती है और इसकी गतिविधियों को भी बंद करने के लिए मजबूर करती है। ऐसी रणनीतियां, अन्य समूहों के कार्य पर व्यापक प्रभाव डालती हैं। सरकार ने ग्रीनपीस के खाते में से विदेशी धन जाने से पहले पूर्व अनुमति मांगने के लिए देश के केन्द्रीय बैंक से पूछा था। ह्यूमन राइट्स वॉच ने अपनी वर्ल्ड रिपोर्ट 2017 में कहा कि भारत सरकार ने विदेशी वित्तीय मदद रोक दी है और सरकार की नीतियों की आलोचना करने वाली मीडिया और नागरिक समाज समूहों पर दबाव बढ़ा दिया है। चिंता का विषय यह है कि सरकार, संगठनों के लिए कम सहनशील हो रही है जो सरकार, सिविल सोसाइटी के साथ–साथ विकास, बुनियादी परियोजनाओं और मानवाधिकार संरक्षण के लिए भी एक नकारात्मक कदम है। सिविल सोसाइटी द्वारा मानवाधिकार संरक्षणयुक्त समाज की स्थापना के पावन उद्देश्य की सार्वभौमिक प्राप्ति हेतु सभी भागीदारों को संकल्प लेना होगा कि प्रत्येक भारतीय को अधिकार प्रदान करने, देश के कोने–कोने में स्थित हर परिवार तक मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्द्धन की रोशनी फैलाने तथा इस धरती, यहाँ के गाँवों और शहरों के लिए, जहाँ सवा एक अरब

से ज़्यादा लोगों के सपने बसते हैं, एक उज्जवल भविष्य का रास्ता प्रशस्त करने के पावन कार्य को पूरा करने के लिए नए जोश से कार्य करना होगा। (सभार मानव अधिकार आयोग)

संदर्भ

1. ह्यूमन राइट्स वॉच, वर्ल्ड रिपोर्ट, 2017।
2. पी. साईनाथ, द डिस्क्रीट चार्म ऑफ सिविल सोसाइटी, द हिंदू, 17 जून 2011।
3. श्रीरिनराय, सिविल सोसाइटीः डेमोक्रेसी पर्सपेक्टिव, टेलर एंड फ्रेंशिस पब्लि., यू. के., 2015।
4. एडिनबर्ग, जॉन सिविल सोसाइटी, दी क्रिटिकल हिस्ट्री, न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999।
5. कविराज, सुदीप्त, सिविल सोसाइटी, हिस्ट्री एंड पॉसिबिलिटीज कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001।
6. अवस्थी एवं माहेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा – 3, 2011।
7. सिविल सोसाइटी प्रोवाइड्स द क्रिटिकल फाउंडशन फोर प्रोमोटिंग ऑल ह्यमन राइट्स, https:èèneva.usmission.gov.
8. ए. बी. सेलिंगमैन, द आइडिया ऑफ सिविल सोसाइटी, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995।
9. कमल लाहबीब, मौरक्को नेशनल ह्यूमन राइट्स काउंसिल https:èèwww.cndh.org.ma 2016.
10. राजो टंडन और रंजीता मोहंती, डज सिविल सोसाइटी मैटर, समकालीन भारत में अभिशासन, सेग प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003।

स्त्री सशक्तीकरण : बदलते जीवन–मूल्य

–रश्मि रानी

स्त्रीवादी विमर्श आज हमारे समय की जरूरत है। यह समग्र आर्थिक–राजनीतिक, सामाजिक, भाषिक और वर्षों से मुखर हुआ स्त्रीत्ववादी विमर्श आज एक वैचारिक मोड़ पर आ खड़ा हुआ है। इक्कीसवीं सदी का आरंभिक वर्ष 'अंतर्राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण वर्ष' के रूप में मनाए जाने से, यह स्वयंसिद्ध है कि 1975 में घोषित 'अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' से प्रारंभ हुआ 'नारी मुक्ति आंदोलन' पूर्ण युवावस्था को प्राप्त कर चुकी है। इस तरह यह विमर्श निरंतर विकसित होता हुआ प्रगति पथ पर अग्रसर है।

वर्तमान उपभेक्ता और उत्तर आधुनिकवाद ने स्त्री–पुरूष संबंधों के समीकरण को बदलना शुरू कर दिया है। भूमण्डलीकरण और बाजारवाद ने स्त्री के महत्व को तो रेखांकित किया ही है साथ ही महिलाएं स्वयं, परिवार एवं समाज में अपनी स्थितिजन्य समस्याओं से जूझते हुए उनके समाधान की तलाश में आगे बढ़ रही हैं। अबला, असहाय, बेबस, कमजोर जैसे विशेषणों से मुक्ति की अभिलाषा लिए महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति अधिक सचेत और मुखरित भी हुई हैं।

यह इतिहास सम्मत सत्य है कि वैदिक संस्कृतिकालीन भारत में स्त्रियों की सामाजिक दशा पुरूषों के समकक्ष थी। कालान्तर में मनु द्वारा प्रणीत वर्णव्यवस्था एवं श्रम विभाजन के अनुपालन में समाज व्यवस्था शनैः शनैः रूग्ण होती गई। श्रमविभाजन के आधार पर जीविकोपार्जन संबंधी श्रम, पुरूषों और गृह संचालन पालन पोषण संबंधी श्रम, स्त्रियों के भाग में आया। शारीरिक शक्ति के आधार पर यह विभाजन अन्यथा न था परन्तु इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि भारतीय स्त्री का दायरा घर की दीवारों तक सीमित होकर रह गया। जिस समाज की आधी शक्ति लक्ष्मण रेखा के अंदर बाँध दी जाए उसका बचाव की मुद्रा में आ जाना स्वाभाविक था। इसलिए विदेशी आततायी आक्रमणों से उत्पन्न स्थितियों के बचाव के लिए समाज में बालिका शिशु की हत्या, बाल–विवाह, पर्दाप्रथा और सतीप्रथा जैसी कुरीतियों का समावेश होता गया। ये पतनोन्मुख व्यवस्थाएं क्रमशः समाज में रूढ़ होती गई। परिणामतः सैकड़ों वर्षों तक संपूर्ण स्त्रीवर्ग प्रायः अशिक्षित ही रह गया। अशिक्षा और अपने भरण–पोषण के लिए पुरूष वर्ग पर निर्भरता इन दो कारणों ने मिलकर स्त्री को पुरूष का अघोषित दास बना दिया।

अपने प्रति अन्याय एवं शोषण के विरूद्ध स्त्रियों के द्वारा आवाज उठाने का आगाज आदिकालीन स्त्रियों जैसे महाभारत में कुन्ती, गांधारी और द्रौपदी द्वारा किया गया था जिन्होंने

समाज की बनी बनाई लीक पर चलने से इनकार कर दिया था। वाल्मीकि सृजित सीता भी अपने अधिकारों के लिए जागरूक महिला के रूप में ही हमारे सामने उपस्थित होती हैं। यही परंपरा मध्यकाल में मीराबाई, सहजोबाई, जनाबाई, रामी, महोदवी अक्का, सुलेसनकवा, गंगासती, रतनबाई, आतुकरी, मौल्ला, बहिनाबाई आदि भारत की विभिन्न स्त्रियों ने कायम रखा। चौंद्रबौती ने न सिर्फ बाँग्ला रामायण में स्वाभिमानी सीता को हमारे सामने प्रस्तुत किया बल्कि अलाउद्दीन खिल्जी के शासनकाल में लगाए नाजायज करों का भी विरोध किया। अठारहवीं–उन्नीसवीं सदी में दुर्गावती, चाँदबीबी, रानी चेन्म्मा, लक्ष्मीबाई, जीनत महल, अवंतिका बाई लोधी, ईश्वरी कुमारी, तेजबाई आदि ऐसी महिलाएँ थीं जो रानियाँ होते हुए भी आत्मसम्मान के लिए संघर्ष में कूद पड़ी।

नवजागरणकाल में स्त्री–उत्थान के लिए किए गए प्रयासों और भारतीय स्वातंत्रय समर में स्त्रियों द्वारा बढ़–चढ़कर दिए गए योगदान एवं बलिदान के कारण ही भारत गुलामी की बेड़ियों से मुक्त हो सका था। नवजागरणकाल की सुधारवादी लहर में बहुत सी स्त्रियां शामिल थीं। सावित्रीबाई फुले, पंडिता रमाबाई, फांसिना सोराबजी, सवर्णकुमारी देवी, रमाबाई राना डे आदि। सन् 1848 तक 'फुले दम्पति ने लड़कियों के लिए पहला स्कूल खोला था। पंडित रमाबाई ने सन् 1880 में एक दलित से विवाह किया। उन्होनें विधवाओं के लिए एक आश्रम भी खोला। आजादी के संघर्ष में महिलाओं ने बढ–चढ़कर हिस्सा लिया। गाँधी जी समाज में महिलाओं के उच्च स्थान के पक्षधर थे। आजादी की लड़ाई में भारतभर की महिलाओं ने चंदा इकठठा किया, भाषण दिए, लोगों को संगठित किया। भूमिगत कार्यवाहियों में सक्रिय रहीं और आत्मबलिदान किया। मैडम भीकाजी कामा ने सन् 1907 में जर्मनी में हुई अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन में भारत का प्रथम राष्ट्रध्वज फहराया। नीनबाला, सरलादेवी, प्रीतिलता, कल्पना दत्त, उज्जवला मजूमदार, दुर्गा भाभी, सुशीला देवी आदि न जाने कितनी महिलाएं थी जिन्होंनें अंग्रेजों के विरूद्ध खुलकर संघर्ष किया। यही नहीं भारत भर की महिलाओं के लिए एक संगठन बनाने की पहल 1910–20 में ही होने लगी। सन् 1926 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन बना। सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा गाँधी, राजकुमारी अमृत कौर, कमला देवी चट्टोपाध्याय, अनसूया साराभाई आदि भी महिलाओं के उत्थान के लिए कार्य करती रहीं।

लेकिन यह भी सर्वविदित है कि आजादी के बाद महिलाओं की स्थिति काफी बिगड़ी। उनके लिए काम करने वाली संस्थाओं में एक ठहराव सा आ गया लेकिन सन् 1975 को अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में घोषित किया गया जिसका महिलाओं की उन्नति के लिए संचालित कार्यक्रमों पर व्याप्क असर पड़ा। 1975 से जुड़ी महिला आंदोलन की धारा ने देश की स्त्री को उसकी मौलिक स्थिति का बोध कराया है। दिल्ली में 1975 से भी पहले दहेज और वैश्यावृति के मुद्दे को लेकर संघर्ष कर रही सरला मुद्गल का भी मानना था कि 1975 से 80 के पाँच साल महिला की चेतना के साल हैं। इन पाँच सालों में महिला संगठनों की जैसे बाढ़ सी आ गई थी। समाजशास्त्रियों की भी महिलाओं की स्थिति में रूचि बढ़ी और

शिक्षा संस्थाओं के अलावा भी अन्य अध्ययन के केन्द्र शुरू हुए। सरकारी स्तर पर कार्यक्रमों में महिलाओं की बात की जाने लगी, यह एक गुणात्मक परिवर्तन था।

शाहबानो केस, सत्ती का मामला और राष्ट्रीय महिला परिदृश्य ये तीन मुद्दे महिला संगठनों की संयुक्त आवाज बनकर उभरे। 1990 तक आते–आते महिलाओं की सोच के दायरों में भी विस्तार हुआ और वे आरक्षण तथा महँगाई जैसे मुद्दों के साथ सड़कों पर आवाज बुलंद करती हुई, अर्द्धनारीश्वर और 'नारी शक्ति' की चेतना का नारा समाज को दे रही थीं। उनके मुद्दे अब महिला तक सीमित नहीं रहे बल्कि उनकी मुक्ति या विकास पूरे समाज की माँग थी। 1975 में अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन के जरिए देश के जिस महिला आंदोलन की शुरूआत हुई थी, वह 20 साल बाद 1995 में विश्व महिला सम्मेलन के आते–आते दोहरी चुनौती के लिए तैयार खड़ी दिखाई देती है। एक ओर जनसंख्या, परिवार नियोजन, पर्यावरण, उदार आर्थिक नीतियाँ थीं तो दूसरी ओर जातिवाद, सांप्रदायिकता, उपभोक्तावाद और राजनीति का अपराधीकरण भी चुनौती के रूप में खड़ा था। कहा जा सकता है कि महिला आंदोलन के सामने यह समय चुनौती के साथ–साथ उसकी कसौटी का भी था।

लेकिन आज हम अपने इर्द–गिर्द सशक्त महिलाओं को विविध रूपों को देखते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि उस कसौटी पर महिलाएँ पूर्णतः खरी उतरती हैं। शिक्षा, खेल, राजनीति और सेवा के विविध क्षेत्रों में महिलाओं में बढ़ते अधिकार इसको प्रमाणित करते हैं। राजनीति के क्षेत्र में इंदिरा गाँधी से लेकर सुषमा स्वराज, जयललिता, मायावती, मीरा कुमार, उमा भारती, सुमित्रा महाजन, निर्मला सीतारमण, प्रतिभा देवी सिंह पाटिल के नाम अग्रगण्य हैं। इसी तरह व्यावसायिक क्षेत्र में इंद्रा नूयी, किरण मजूमदार शॉ, वन्दना लूथरा, शिखा शर्मा ने अपनी पहचान बनायी है। खेल के क्षेत्र में भी ने खिलाड़ी के रूप में पी.टी. उषा, कर्णम मल्लेश्वरी, सायना नेहवाल, सानिया मिर्जा, अंजली भागवत, पी.वी.सिंधू, मिताली राज, झूलन गोस्वामी, हिमा दास, दीपा कर्माकर, गीता फोगट आदि की उपलब्धियों इन्हें किसी परिचय का मोहताज नहीं बनातीं।

क्षेत्र चाहे राजनीति का हो या सेना के अधिकारी का, आसमान में हवाई जहाज उड़ाती पायलट हो या समुद्री तटों की रक्षा करते सेनानी, सभी में महिलाओं ने पुरूषों के एकाधिकार को समाप्त किया है। शुरूआती दौर में जब महिलाएं संघर्षरत हुई होंगी तो सबके जेहन में एक अनुत्तरित सवाल उठता होगा कि ये औरतें आखिर चाहती क्या हैं? जिनके लिए भी यह प्रश्न तब अनुत्तरित था, आज के दौर में लड़कियों और महिलाओं के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष से प्रतिस्पर्द्धा रखते हुए सफलता की नित नई ऊँचाइयों को छूते देखकर समझ में आ गया होगा कि वे औरतें आखिर चाहती क्या थीं? यह उन्हीं औरतों का बोया हुआ है जिसे आज की महिलाएं फसल के रूप में काट रही हैं।

हमारे लेखक

विनायक इंगले
द्वारा भूषण भीमराव जवरे
RBI- 41 C लाडीस चाल, रेलवे स्टेशन
बुरहानपुर (म.प्र), 450331

ज्योत्स्ना खरे
एन.इ.एस. शिक्षा महाविद्यालय
होशंगाबाद
मध्य प्रदेश

अशोक कुमार नेगी
व्याख्याता
जिला शिक्षा एंव प्रशिक्षण संस्थान
खण्डवा
मध्य प्रदेश

डिम्पल कुमारी
सामाजिक विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर, राजस्थान